त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

साहित्य सरोज

वर्ष 4 अंक 1 जनवरी 2021 से मार्च 2021 मुल्य 30 रूपया

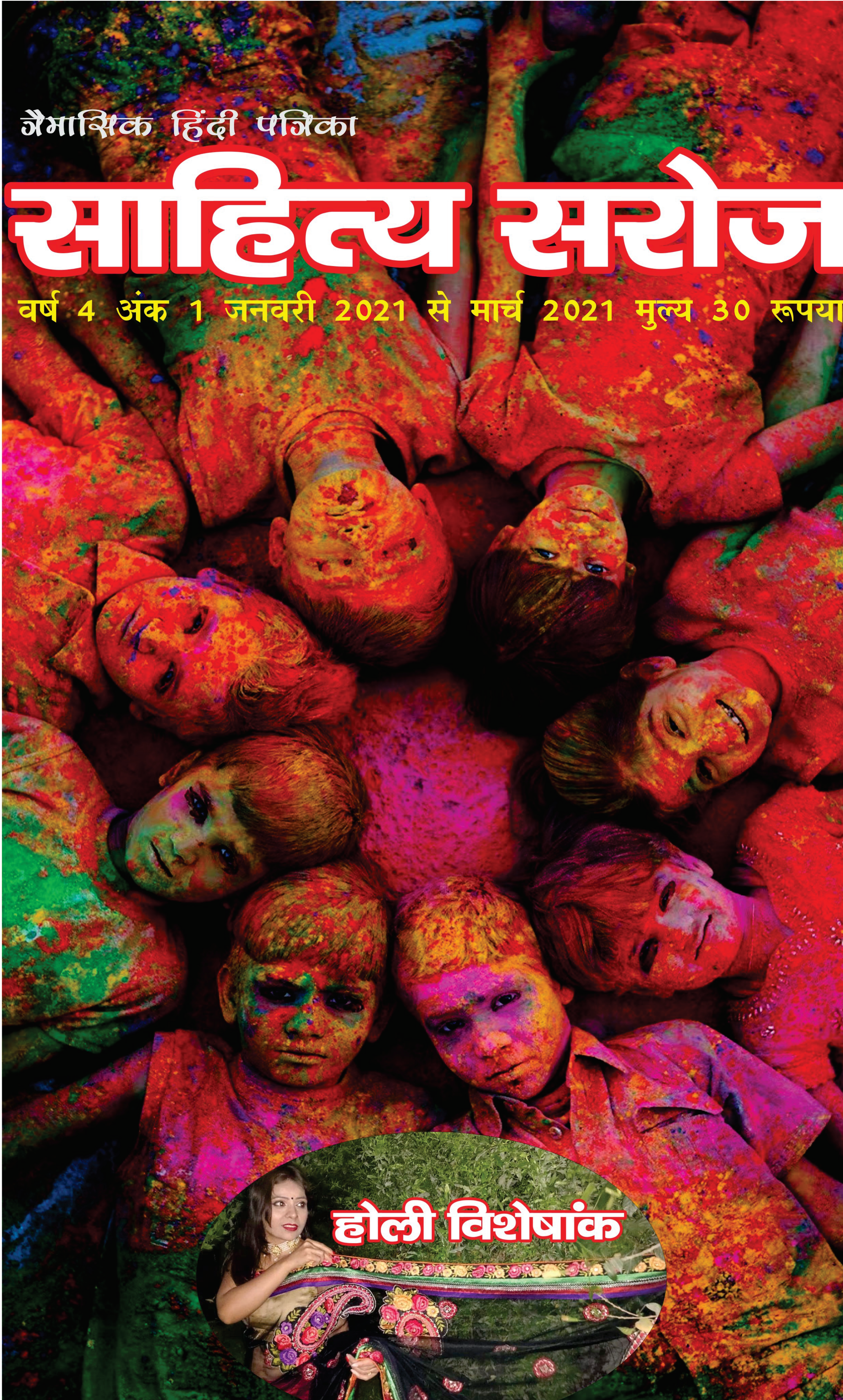

होली विशेषांक

साहित्य सरोज

एक सम्पूर्ण साहित्यिक पत्रिका

वर्ष-4 अंक -1

माह जनवरी 2021 से मार्च 2021

संस्थापिका -: स्व०श्रीमती सरोज सिंह

प्रधान संपादक -: श्रीमती कान्ति शुक्ला ''उर्मि'' भोपाल

प्रकाशक -: अखंड प्रताप सिंह''अखंड गहमरी''

संपादक -: डा० कमलेश द्विवेदी, दशरपुरवा कानपुर

अध्यक्ष तकनीकी विभाग -: श्री राजीव यादव

प्रधान कार्यालय -: मेन रोड,गहमर, गाजीपुर

प्रधान कार्यालय व्यवस्थापक :-

प्रशांत कुमार सिंह

ईमेल sarojsahitya55@gmail.com

9451647845

बेवसाइट-: https://sarojsahitya.page

मोबाइल अप्लीकेशन प्ले स्टोर- साहित्य सरोज

प्रति अंक -30रूपये मात्र,

स्वत्वाधिकारी,मुद्रक, प्रकाशक अखंड प्रताप सिंह, रधुवर सिंह का कटरा, मेन रोड, ग्राम व पोस्ट गहमर, तहसील जमानियाँ, जनपद गाजीपुर, उ०प्र० पिन 232327 द्वारा पंकज प्रकाशन आमघाट,गाजीपुर से मुद्रित एवं अखण्ड प्रताप सिंह द्वारा प्रकाशित।

पत्रिका में छपे लेख,कहानीयाँ एवं अन्य विषयक सामाग्री लेखक के अपने विचार है, इनका किसी व्यक्ति या स्थान से मिलना संयोग मात्र है। किसी विवाद का निपटारा गाजीपुर न्यायालय में होगा।

तकनीकि पक्ष-: कम्पोजिंग, डिजाइनिंग, कवर डिजाइनिंग अखंड प्रताप सिंह''अखंड गहमरी''

प्रिटिंग पंकज प्रकाशन आमघाट गाजीपुर

चित्र -गूगल ईमेज द्वारा।

हमें करें फालो टियूटर पर और सस्क्राइव करें हमारे यूटियूब चैनल साहित्य सरोज को अखंड गहमरी''

अनुक्रमाणिका

कान्ति का कोना	कान्ति शुक्ला	02
खोल दो खिडकियाँ	अर्चना मंडलोई	03
संकल्प	सरला सिंह	04
अनचाही खुशियाँ	एकता कुमारी	05
इच्छाओं का विस्तार	विजय शंकर सिंह	06
मैं ना खेलूँगी होली	मीना अरोड़ा	06
एकलब्य हार गया	लीला पिपलानी	07
आदिवासीयों का	नीता चर्तुवेदी	07
कल की होली	अखिलेश त्रिवेदी	08
हैपी होली	जमुना कृष्ण राज	08
लाल गुलाबं	प्रीति चौधरी	09
ईश्वर महान	राजेश सपते	09
यादो की होली	निरूपमा त्रिवेदी	10
वो भी क्या होली	रोहित मिश्रा	11
लाकडाउन वरदान	अरूण अर्णव खरे	12
बच्चों के बैद्धिक	नीरज मिश्रा	17
रिक्से वाला	अजय मोटवानी	18
होली मनायें	बंशिका अल्पना दुबे	19
आयरन लेडी	आशा शैली	20
माँ कामाख्या धाम	कमलेश द्विवेदी	23
जोगीरा	आराधना प्रसाद	26
प्रीत का रंग	पुष्प लता शर्मा	26
ठोकर लगा	निरूपमा त्रिवेदी	26
जीजा संग होली	ममता गिनोड़िया	27
नियती	अतुल त्रिवेदी	28
उम्मीद का बक्सा	मीना अरोड़ा	29
पेड़ की जुबानी	पूनम झा	30
कोशिश	जगन्नाथ पटौदी	30
पुरूषों की बराबरी	संतोष शर्मा शान	31
होली	किरण बाला	34
होली जो ना	सीमा रानी मिश्रा	35
गुम रिश्तो की मिठास	अखंड गहमरी	36

02 अप्रैल महिला उत्थान दिवस को मनायें महिला उत्थान दिवस के रूप मे, लायें गुमनाम को आगें

अनुभूतियों, विचार और चिंतन की मानव जीवन के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका है जो आदर्श बनकर उपस्थित परिस्थितियों में संघर्षरत होते हुए भी आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है , यही जीवन का यथार्थ है । मानव का चिंतन ही साहित्य की सर्जना करता है । साहित्य में जीवन के समस्त पहेलुओं की विवेचना होती है जिसमें एकांगी दृष्टकोण का स्थान नहीं क्योंकि साहित्य में जीवन की व्यापकता की संस्थापना समाहित है । यह सम्बंध सूत्र परिस्थितियों पर निर्भर करता है और स्वाभाविक रूप से साहित्य पर परिस्थितियों और परिवेश का प्रभाव पड़ता ही है इसीलिए साहित्य में शाश्वत सिद्वांतों के समन्वय के साथ युगानुकूल सामयिकता विद्यमान रहती है । पत्र-पत्रिकाओं ने सदैव से ही समाज के बदलाव और नवीन राहों के दिग्दर्शन, विकास और उद्भावना की तलाश का महती कार्य किया है जो सामान्य प्रक्रिया मात्र नहीं वरन् एक कठिन साधना रही है और हमारी साहित्यिक पत्रिकाओं की परम्परा अत्यंत समृद्वशाली रही है ।

आज बढ़ती तकनीक ,पत्रिकाएं खरीद कर न पढ़ने की प्रवृत्ति और शब्दों के क्षरण होने के कारण पत्रिकाओं का दायित्व और अधिक बढ़ गया है । वर्तमान में लाभ अर्जित करने की प्रतिस्पर्धा जिसमें आभ्यांतरिक साधना के लिए अवकाश नहीं रहा । जहाँ साहित्य की समन्वयात्मक शक्ति और विचारों की सांस्कृतिक दृष्टि को परे रख तात्कालिक हितों को प्रश्रय देने का भय व्याप्त हो तो पत्रिकाओं का जन मानस से आत्मीय रिश्ता कैसे बने, गहन विमर्श और आत्म विश्लेषण का विषय है ।

जब किसी पत्रिका के साथ साहित्यिक शब्द जुड़ जाता है तो बात संस्कृति और संस्कार की आ जाती है । कारण कि साहित्य परिष्कार है । सोच- विचार, चिंतन- मनन,रहन सहन, आदतों आदि में मानवीय परिष्कार का नाम ही संस्कार है । यदि हमें जीवन मूल्यों की रक्षा करना और अपसंस्कृति के संकट से समाज को बचाना है तो ऐसे संक्रमणशील समय में साहित्य के अनुशीलन, विचार, आत्ममंथन और दूर दृष्टि का सम्यक संतुलन ही समस्याओं के निराकरण में प्रभावी भूमिका का निर्वाह कर सकता है क्योंकि मनुष्य की वृत्तियों और अनुभव के सत्य के आधार पर किया गया रचना कर्म सर्वकालिक और सांस्कृतिक चिंतन को आश्वस्ति प्रदान करने वाला होता है ।

आधुनिक परिवेश की भौतिकवादी संस्कृति ने वैचारिक आत्मरिक्तता को जन्म दिया है । विज्ञापनों का मायाजाल हमारी सांस्कृतिक अस्मिता और नैतिक मूल्यों का ह्रास कर बाह्य सौन्दर्य के लिए प्रेरित कर रहा है । जबकि सभ्यता और संस्कृति की प्रगति भौतिकता से नहीं आभ्यांतरिक विकास से होती है ।

अतः सांस्कृतिक अवमूल्यन की रक्षा के लिए साहित्यिक पत्रिकाओं के प्रकाशन, संरक्षण और संबर्द्धन को प्रोत्साहित करना हमारा कर्तव्य बन जाता है।

कान्ति शुक्ला,प्रधान संपादक साहित्य सरोज

नवगीत

पीत वर्ण सरसों के मुख पर,
गहन उदासी है ।
नीला अलसी- फूल ऐंठ कर ,
हुआ प्रवासी है ।
दलित पलाशों को वसंत ने,
दिया खूब अनुदान ।
नंदन कानन उपवन सारे ,
उच्च वर्ग हैरान ।
भेदभाव यह समझ न आया,
तिकड़म खासी है ।
आभाहीन मंजरी सूखी,
कोयल की सुन हूक ।
जीर्ण शीर्ण है पीली फतुही ,
हुरियारे हैं मूक ।
गलियों के गालों पर गड्ढ़े ,
सघन निकासी है ।
कोयल जलावतन कर डाली,
कौओं का है शोर ।
चंपा जुही लुटीं कचनारें ,
पतझड़ भारी जोर ।
वृक्ष नहीं सरसें आंगन में ,
छाँव धुँआसी है।
आज आदमी स्वंय ततैया ,
जैसा लगता पीत ।
जहरीले छत्ते आच्छादित ,
खुद से है भयभीत ।
विष की खेती नयी सदी में,
नदिया प्यासी है।

कान्ति शुक्ला

कहानी

खोल दो खिड़कियाँ

अर्चना मंडलोई
भोपाल म०प्र०
9406616871

होली की हुडदंग से सारा मोहल्ला रंगीन हो रहा था। लेकिन आज उसने अपने आप को कमरे में बंद कर लिया था। उसे डर था कि कही उसके बे-रंग जीवन की सफेद साड़ी पर गलती से रंग के छींटे न पड़ जाए । बाहर शोर बढ़ता ही जा रहा था ,मन बार- बार रंगो से खेल रहे लोगो की और जा रहा था ,ठहाको का शोर उसकी आत्मा को झकझोर रहा था । उससे रहा न गया, खिड़की की झीरी से देखा लोग रंग से सरोबार थे कोई पहचान में नहीं आ रहा था ।

उसकी नजर अशोक की तस्वीर पर चली गई, स्मृति में अशोक की यादे एक-एक कर चल चित्र की तरह उसके सामने घुमने लगी ।ये हमारी पहली होली ही तो थी ,अशोक सेना से छुट्टी लेकर आने वाले थे । छेड़ते हुए कहते - ये हमारी पहली होली हैं देखना यादगार बना दूँगा । कितनी तैयारी की थी । माँ ने तो पूरे घर को सर पर उठा रखा था । पापा चिढ़ाने के अंदाज से कहते - बेटे के लिए बनाई गुझिया हमें नहीं मिलेगी क्या ? माँ भी तुनक कर कहती "जरूर मिलेगी,मगर उसके आने पर "।

पापा की खुशी भी देखते ही बनती थी ,माँ के कहते ही थैला उठाकर चल पडते सामान लाने । घुटनों का दर्द तो जैसे वे भूल ही गए थे । फिर उनके आने का दिन आ ही गया वे आतंकी हमले में शहीद हो , तिरंगे में लिपटे आए थे ।उसकी आँखों से आँसू की दो बूँद लुढ़क कर सफेद साडी में विलीन हो गई थी । बेटे के जाने का दुख, और बहू को देखकर निःसहाय सी माँ कभी बंद दरवाजे की ओर तो कभी सामने रंगीन आसमान की ओर देख रही थी ।

पापा घुटनों के दर्द के बीच हृदय में उठे असहाय दर्द को छुपाने की कोशिश कर शायद स्वंय को समझाने का प्रयास कर रहे थे ।
माँ जैसै किसी निर्णय के साथ बंद दरवाजे की ओर चल पडी ।दरवाजा खोलो बहू बाहर से सासू माँ दरवाजा पीट रही थी ।अपने आप को संयमित कर उसने दरवाजा खोल दिया ।

सामने हाथों में रंग लिए सासू माँ खडी थी ।वो कुछ कहती उससे पहले ही माँ रंग के छीटे उसकी सफेद साड़ी पर बिखेर चुकी थी ।माँ !ये क्या किया आपने? वो चीख पड़ी । सासू माँ उसे गले लगा कर रूँधे गले से बोली - बहू ये रंग अशोक की यादे है , वो मरा नहीं देश के लिए शहीद हुआ है । उसके शेष रंग अब तुम्हें जीना है ।
ये आप क्या कह रही है ? वो बोली।
हाँ बेटा उतार फेको ये सफेद रंग ,खोल दो ये खिड़कियाँ और दरवाजे, वो देखो खुले आसमान में कितने रंग भरे हुए है?बेटे की तस्वीर की ओर देखते हुए माँ बोली देखो बहू अशोक भी खुश होगा ।अश्रुधारा में बहकर साडी में लगे रंगो को भीगो रही थी ।

पिता हर्ष मिश्रीत भीगी आँखों को पोछते हुए उठ चुके थे,खिड़कियाँ खोलने के लिए ।

संकल्प

दीपू ज्यादातर विद्यालय में देरी से ही पहुँचता था । देर से आने वाले बच्चों की अलग लाइन बनवाई जाती है तथा उनका नाम भी उनकी कक्षा के अनुसार लिखा जाता है ताकि उनके कक्षाध्यापक उन्हें जान सकें और समझा सकें । उस रजिस्टर में नवीं कक्षा में पढ़ने वाले दीपू का नाम एकाध दिन छोड़कर रोज ही लिखा होता। उसके कक्षाध्यापक केशव प्रसाद उसे रोज समझाते की देरी से विद्यालय मत आया करो,छुट्टी मत लिया करो पर वही ढाक के तीन पात ।दीपू ज्यादातर छुट्टी लेता या देर से विद्यालय आता ।आखिर एक दिन तीन दिन की छुट्टी के बाद देरी से आये दीपू पर केशव जी बरस पड़े । डाँट खाने के बाद दीपू की आँखें बरस पड़ी और केशव जी उसमें पूरी तरह से भीग गये ।

दीपू एक होनहार छात्र था । अभी आठवीं कक्षा तक समय पर आना सौ प्रतिशत उपस्थित होना उसकी खासियत थी । चाहे खेल हो या पढाई हर क्षेत्र में ही अव्वल ।ऐसा लड़का पढ़ाई में तो पीछे हो ही रहा था वह खेल से भी विमुख हो रहा था ।वह छुट्टी होते ही सीधे घर भागता था। उसके अध्यापक को उसके इस बदलाव पर आश्चर्य हो रहा था ।उन्होंने उससे कई बार पूछने की कोशिश की पर वह टाल गया ।"कोई बात नहीं है सर,अब मैं छुट्टी नहीं लूँगा और समय पर विद्यालय आऊँगा ।पर फिर वही सारी चीजें ,उसकी उदासी, विद्यालय देर से आना छुट्टी लेना आदि ।

केशव जी जब जब उसके माता-पिता को विद्यालय बुलाते कोई न कोई बहाना सुनने को मिल ही जाता ।आखिर परेशान होकर केशव जी ने समय निकालकर दीपू के घर जाने की योजना बनायी

रजिस्टर से दीपू के घर का पता नोट करके छुट्टी के बाद दीपू को बिना बताये उसके पीछे पीछे चल दिये । बाइक उन्होंने स्कूल में ही छोड़ दी थी ताकी दीपू अगर रास्ते में कहीं रुकता है तो भी उसे रंगे हाथों पकड़ सकें ।" अरे केशव जी ये पैदल ही कहाँ चले ?" कोई न कोई परिचित मिल ही जाता और वे "कुछ नहीं बस कुछ जरूरी काम है ।" कहकर उससे पीछा छुड़ाकर दीपू के पीछे हो लेते ।काफी दूर और संकरे रास्ते से गुजरते हुए उन्हें दीपू पर तरस भी आ रहा था एक छोटा लड़का इतनी दूर चलकर आता है ।आखिर एक मकान में दीपू अन्दर जाने लगा । उसमें कई छोटे छोटे कमरे बने थे । दीपू ने एक कमरे का ताला खोला बैग रखकर फिर बाहर आया और बगल के कमरे में चला गया । केशव जी को लगा की यह बगल के कमरे में क्यों गया ? वे कुछ और सोचते की उन्होने देखा दीपू एक छोटी लड़की को लेकर उस कमरे से निकलकर अपने कमरे में जा रहा है।तभी उसका छोटा भाई भी बैग टांगे आ गया शायद वह पास के किसी प्राइमरी स्कूल में पढ़ता होगा । फिर इसके माता पिता कहाँ है ? गाँव भी जाते तो छोटी लड़की को तो साथ ही ले जाते ही । शायद दोनों किसी काम से गये हों ?केशव जी कुछ भी समझ नहीं पा रहे थे ।आखिरकार केशव जी ने बगल वाले परिवार से दीपू के बारे में जानकारी हासिल करने के लिए उनसे बातचीत करने का मन बनाया ।

बगल के घर में खटखटाने के बाद एक बुजुर्ग महिला बाहर आयी । केशव जी ने उसे अपना परिचय दिया फिर दीपू के बारे में पूछा, "दीपू मेरे ही विद्यालय में पढ़ता है ,इसके माता-पिता से मिलना था ।"

"नमस्ते सर आइए घर में बैठिए,मैं चाय बनाती हूँ ।"

"नहीं चाय रहने दीजिए ,बस दीपू के बारे में जो जानती हैं बताइए।" "सर जी इसके पिता तो छह महीने से एक सरकारी अस्पताल में भर्ती हैं और माँ उनको भी देखती है और किसी कम्पनी में भी काम करती है ।""क्या हुआ इसके पिता

को ?""क्या बतायें सर जी , वह रोज शराब पीकर घर आता था और उसी को लेकर घर में रोज लड़ाई झगड़ा होता ही रहता था । एक दिन गुस्से में आकर इसके बाप ने तेजाब ही पी लिया ।" "फिर?" केशव जी सहम से गये ।

"फिर क्या ,लोग उसे लेकर अस्पताल भागे , किसी तरह जान तो बची पर छह महीने से अस्पताल में ही है ,छुट्टी अभी भी नहीं मिली है। माँ बेचारी दिन में कम्पनी में काम करती है और रात में खाना लेकर फिर अस्पताल जाती है और उसे भी सम्भालती है ।"

फिर बच्चे ?"अरे सर जी कुछ दिन रिश्तेदार रहे फिर वे भी भाग गये । अब घर का काम तथा बच्चे दीपू ही सम्भालता है ।"

केशव जी आवाक से खड़े थे । एक छोटे से नवीं कक्षा के बच्चे पर इतना सारा बोझ ? ये परिस्थितियाँ इंसान को कितना मजबूर कर देती हैं ? उस महिला को धन्यवाद कहकर केशव जी दीपू के कमरे की ओर बढ़ चले ।

दरवाजा खटखटाने पर दीपू के छोटे भाई ने दरवाजा खोला । दीपू गैस के चूल्हे पर कुछ बना रहा था । सामने केशव सर को देखकर दीपू चकित रह गया ।सर जी आप ?

मुझे नहीं खिलाओगे ?

अरे सर क्यों नहीं ,आप बैठिए कहकर चारपाई पर फटे चद्दर को बिछाने लगा ।"इसे रहने दो ,ऐसे ही बैठ जाऊँगा ।" चारपाई पर बैठते हुए केशव सर ने कहा। दीपू से उसके घर का सारा हालचाल पूछकर उन्होंने दीपू तथा उसके भाई को ट्यूशन पढ़ाने छोटी बहन का एडमिशन नर्सरी में कराने तथा उसके पिता के अच्छे इलाज की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली ।

दीपू जैसे प्रथम स्थान पाने वाले एक कुशाग्र बच्चे का भविष्य बचाने का केशव जी ने संकल्प ले लिया था ।

डा .सरला सिंह स्निग्धा
दिल्ली
9650407240

अनचाही खुशियां

तुम बिन भाता नहीं मुझे ये फागुनी बयार,
तुम आओ तो आजाए जीवन में बसंत बहार...
तेरे ख्याल मेरे जेहन में जब भी उतरते हैं,
तो छा जाती चेहरे पर अनचाही खुशियां बेशुमार

तुम्हें देखकर खिल जाता मेरे रूप पर निखार...
तुम आओ तो आजाए जीवन में बसंत बहार।

अक्षर-अक्षर से बुन कर बनाएंगे रंगोली,
प्रेमरंग में डूब कर खेलेंगे झूम के होली।
हृदय द्वार पर भावों का कलश सजाकर,
गाएंगे स्वागत गान हम मिल कर हमजोली।

तुम्हें देखकर खिल जाता मेरे रूप पर निखार...
तुम आओ तो आ जाए जीवन में बसंत बहार।

जा रे मन का पंछी तू जा मेरे साजन के आँगन
इतना कहना कि ढूंढ रहा गली गली चंचल मन
कोयल गाए सरगम,भौंरे भी तान रहे हैं छेड़,
वातें भी सर-सर कर सुनाए गीत वितान।
फिर भी जाने क्यों सूना सा लगता है उपवन।

तुम्हें देखकर खिल जाता मेरे रूप पर निखार...
तुम आओ तो आ जाए जीवन में बसंत बहार।

तुम्हारे बिना साजन मेरा नहीं कोई अर्थ,
तुम्हारे बिना मेरा संपूर्ण जीवन हुआ व्यर्थ।
तुमसे मेरी दुनियाँ सजी है तुम हो मेरे आधार,
तुम्हारे मुख मंडल पर झलके खुशियों का अर्थ।

तुम्हें देखकर खिल जाता मेरे रूप पर निखार...
तुम आओ तो आ जाए जीवन में बसंत बहार।

एकता कुमारी , बेलहर, बाँका, बिहार

इच्छाओं का विस्तार

हम सभी जिस व्यवस्था में रहते है, वहां संतोषम परम सुखम, पैर उतना ही फैलाइए जितनी चादर लंबी हो जैसी बाते सिखाया जाता है। कुल मिलाकर इच्छाओं को कम करने को सिखाया जाता है। मेरे विचार से थोड़ा इससे हटकर सोचना चाहिए। हम कुछ भी एक्स्ट्रा चाहते है और उसको पाने की कोशिश करते है तो दूसरों से हम एक कदम आगे हो जाते है और यदि वो कोशिश लंबे समय तक करते रहते है तो एक ऐसे वृक्ष बनकर उभरते है जिसके नीचे काफी लोग शरण पाते है। हमें दूसरों के लिए ही आगे बढ़ने का प्रयास करना चाहिए। कुल मिलाकर संतोषम की भावना से आगे बढ़ना है, इच्छाओं का विस्तार करना है।

किसी भी प्रकार की सफलता का बीज है इच्छा। यह जितनी दृढ़ और बलवती होगी, उसे प्राप्त करने के संकल्प उतने ही मजबूत होंगे। ऐसे में, उसे प्राप्त करना भी उतना ही सहज हो जाएगा। इसके विपरीत इच्छाओं की शिथिलता हमारे व्यक्तित्व को गुणरहित बना देती है। शोधों की मानें, तो नववर्ष पर जितने लोग लक्ष्य निर्धारित करते हैं, उनमें से 92 प्रतिशत इच्छा की दृढ़ता के अभाव में उन्हें हासिल नहीं कर पाते। ऐसा इसलिए होता है कि निर्णय लेने की भी दृढ़ता नहीं होती, सदैव कल पर टालते रहते है। अपने कम्फर्ट जोन को त्याग नहीं पाते, उपलब्धियां कम्फर्ट के बाहर ही मिलती है। हम कुछ भी एक्स्ट्रा करते है न, तो धीरे धीरे करके अपने समकक्षों से काफी आगे हो जातो है। सिर्फ 1ः ही दूसरों से बेहतर किया जाय तो एक समय बाद हमें बहुत आगे कर सकता है। हमें अपने भविष्य का एक आइडियल व्यक्तित्व बनाकर रखना चाहिए। प्रत्येक दिन स्वयं को मानिटर करना है कि हम जो कर रहे है, वो उस काल्पनिक व्यक्तित्व की तरफ ले जा रहा है, या दूर। यदि दूर ले जा रहा है तो उसमें सुधार करना है। अच्छे पुस्तकों और अच्छे लोगों के सम्पर्क में रहना है। कब हम परिवर्तित हो जायेगे, कब हमारा व्यक्तित्व बड़ा हो जाएगा, कब दूसरों के लिए प्रेरणास्रोत हो जाएंगे, कब दूसरे लोग का हमसे भला होने लगेगा, पता ही नहीं चलेगा।

विजय शंकर सिंह
निरीक्षक,
उत्तर प्रदेश पुलिस, लखनऊ

'मैं ना खेरूंगी होरी–मीना अरोड़ा

पिताजी का ट्रांसपोर्ट का बिजनेस था। एक ट्रक ड्राइवर विवाह के बाद अपनी पत्नी के साथ हमारे घर रहने लगा।एक रोज हमने बातों बातों में उसकी नई नवेली पत्नी से होली के आगमन की खुशी जाहिर की।होली सुनते ही वो बिदक कर बोली-“मैं ना खेरूंगी होरी।ष्उसके मुख से ना सुनकर, हमें हमारा होली का शिकार मिल गया। मैंने और भाईयों ने बड़ी ही मासूमियत से कहा-“होली तो हम भी नहीं खेलते।” हमारी बात सुनकर उसके चेहरे पर इत्मीनान की रेखाएं थीं। उसके कमरे से बाहर आकर हमने काफी देर सिर मिला कर खुसर-पुसर की।

घर के आंगन में एक पुरानी चारपाई बिछी रहती थी। होली से सप्ताह पूर्व हमने एक चादर उस पर बिछानी आरंभ कर दी और चारपाई पर बैठने लगे। ड्राइवर की पत्नी भी अपने कमरे से बाहर आकर हमारे साथ चारपाई पर बैठ जाती। आखिर वह दिन आ गया जिसके इंतजार में हम रोज चारपाई पर चादर बिछा रहे थे।होली की एक शाम पूर्व हमने चारपाई की रस्सियां काट दीं और चादर को चारपाई के पायों से ढीला सा बांध दिया चारपाई के नीचे एक बड़ा सा टब, रंग का घोल कर रख दिया।बस फिर हम अपने शिकार के इंतजार में चारपाई के आसपास खड़े होकर इधर-उधर की बातें करने लगे।रोज की तरह ड्राइवर की पत्नी भी आ गई।हमने उसे चारपाई पर बैठने को कहा।उसे चारपाई पर बैठने की आदत थी सो झट से बैठ गयी। बैठते ही चादर समेत रंग के टब के अंदर जा गिरी।रंग से भरी बाल्टी जो हमने छिपा कर रखी थी झट से उसके ऊपर से उड़ेल दी।बस फिर ऊपर नीचे रंग ही रंग और जोर जोर के ठहाके।

कहानी

एकलब्य हार गया

न जाने कैसे घासीराम के दिल में बाला जी के प्रति आस्था और विश्वास उत्पन्न हो गया था।गाँव में रहते हुए उसे बरसों हो गए थे।बचपन में शाला में उसे अलग बैठाया जाता, प्यास लगने पर दूसरे विद्यार्थी उसे पानी पिलाते थे क्योंकि उसे हैंडपंप छूने या प्याऊ पर जाने का अधिकार नहीं था।विद्यालय में वह अलग बैठ कर खाना खाता था।मां बापू का गाँव वालों द्वारा किया गया तिरस्कार तो वह आये दिन देखता ही रहता थाऔर बड़ी मासूमियत से मां से पूछता मां गांव वाले तुम्हारे साथ ऐसा व्यवहार क्यों करते हैं?मां आंखों में आये आंसू छिपा कर कहती बेटा!हम दलित हैं इसलिए।परन्तु फिर भी घासीराम को यह विश्वास था कि एक न एक दिन बाला जी हमारी स्थिति ठीक कर देंगे।स्कूल से लौटते समय बालाजी के मंदिर के आगे एक कोने में खड़े होकर हाथ जोड़ना उसका नित नेम था।मंदिर के अंदर तो वह जा नहीं सकता था पर अपना मंदिर कभी बनवाने की उसकी प्रबल इच्छा थी।समय बीता, धीरे धीरे वह प्रौढ़ता की ओर बढ़ता गया साथ ही भवन निर्माण का काम करते करते वह भवन निर्माण कला में पारंगत हो गया।अब उसने सोच लिया कि मैं अपनी ही झोंपड़ीके चबूतरे पर बालाजी की मूर्ति स्थापित करके मंदिर अवश्य बनाऊंगा। मजदूरी से मिले पैसों से अंशदान निकाल कर एकत्रित करना शुरू किया।धीरे धीरे मंदिर बनाने जितनी धन राशि उसने एकत्रित कर ली।शेष मूर्ति आदि के लिए उसने गाँव के महाजन से मुंह मांगी ब्याज दर पर उधार ले लिया और मंदिर निर्माण का कार्य शुरू कर दिया।शहर जाकर मूर्ति भी ले आया और ऊंची दक्षिणा का प्रलोभन देकर एक पंडित भी, गाँव वालों के बहिष्कार और धमकियों के बावजूद उसने हिम्मत नहीं हारी और गांव के दलितों को इकट्ठा कर मंदिरों की प्राण प्रतिष्ठा का काम सम्पन्न कर दिया।यद्यपि घासीराम ने बादलमें थेगली लगाने का काम तो करलिया था परंतु इस कार्य से ऊंची जाति की बौखलाहट बढ़ गई।उन्होंने मंदिर की तोड़ फोड़ करना और घासीराम के परिवार जनोंको सताना शुरू कर दिया।घासीराम परिवार सहित कलक्टर कार्यालय के बाहर धरने पर बैठ गया।राजनीति सक्रिय हो गई।पक्ष-विपक्ष, स्थानीय मीडिया, मानवाधिकार कार्यकर्ता और दलित समाज के कार्यकर्ताओं ने अपने अपने तेवर दिखाए।अंततः प्रशासन को पांच पुलिस कर्मी घासीराम की सुरक्षा के लिए लगाने पड़े।परंतु राजनीति ने फिर पलटी खाई और सुरक्षा हटा ली गई।और एक दिन21वीं सदी का यह एकलव्य बादलों में थेगली लगाने के बाद हार कर गाँव छोड़ कर न जाने कहाँ चला गया।

लीला पिपलानी
जोधपुर

आदिवासियों का वैलेंटाइन डे

आदिवासी क्षेत्रों जैसे अलीराजपुर झाबुआ बड़वानी आदि लगभग 60 स्थानों पर भगोरिया आदिवासियों का प्रमुख उत्सव होली के कुछ दिनों पहले शुरू हो जाता है। बड़ी दीदी की पोस्टिंग अलीराजपुर में जब हुई उस दौरान मैंने भगोरिया की होली जोकि बसंती रंग में रंगी हुई चारों ओरढोल नगाड़ा की थाप और बांसुरी की मधुर ध्वनि से मन बड़ा आकर्षित हुआ गोलाकार समूह में युवक युवतियां पारंपरिक परिधानों में, वाद्य यंत्र के साथ पांव में घुंघरू हाथों में कई रंगों के रुमाल बांधे हुए नृत्य करते हुए नजर आ रहे थे। मैंने अपने जीजा जी से पूछा यह कैसा उत्सव है जीजा जी ने हंसते हुए कहा कि आदिवासियों का एक प्रकार का वैलेंटाइन डे होता हैयहां फूल लेकर नहीं गुलाल लगाकर एक दूसरे पर रंग डाल कर अपने प्यार का इजहार करते हैं । और जीवन साथी भी चुन लेते हैं इसलिए युवक युवतियां इतनी आकर्षक वेशभूषा में रहते हैं। वैलेंटाइन डे का नाम सुनकर मुझे बड़ी हंसी भी आई। उनकी इस अनोखी परंपरा को देख हम सभी बहुत प्रभावित हुए।

नीता चतुर्वेदी विदिशा मध्य प्रदेश

कल की होली

झमाझम बाजि रही पैजनियां... झमाझम बाजि रही पैजनियां...काहे की तोहरी पांव पैजनियां
काहे कमर करधानिया
काहे की तोहरी मोहर माला
काहे की नाक नथुनियाँ....
झमाझम बाजि रही पैजनियां.....

उपरोक्त फगुआ गीत की पंक्तियां पढ़कर कितने लोगों के होठों पर मुस्कान फैल गयी होगी और गाँव की होली याद आ गयी होगी। अब न तो फूलों के बने रंग हैं ,न ही शुद्ध अबीर और न ही ढोलक की थाप और झीके-मंजीरे पर एक-दूसरे से सवाल -जवाब करते हुए फगुआ गाते जोड़ीदार..... किंतु दिल्ली जैसे महानगर में कमाने-खाने आये हम पुरबिहों ने अभी यह परंपरा जीवित रखी है।

बसंत पंचमी आते ही श्री राम प्रताप यादव "दादा" का इंतजार रहता है। वह नौकरी के कारण नोएडा में रहते हैं।वह आते हैं और हम सब फगुआ की शुरुआत कर देते हैं। प्रेम नाई की ढ़ोलक, सोमनाथ मौर्य जी का मंजीरा और मेरा झींका उठता है।फैजाबाद के विजय विकल जी इस वर्ष कोरोना के कारण नहीं आ पाए।वह लोक गायक और कीर्तनकार हैं।राम निहोरे जी, झांगा भाई, अजय पंडित जी, हरीश जी,राजेन्द्र जी, शिवकुमार जी भी अपने पिताजी की जगह उपस्थित रहते हैं और भी बहुत से मित्र हैं जो बाद में जुड़ेंगे। राजेश जी,रमेश जी,राम बहादुर जी,सजंय जी,अजय जी, अमरेश जी,महात्मा जी आदि कारवां बढ़ाएंगे। वंदना की शुरुआत मैं करता हूँ-सुमिरन करूँ आदि भवानी का.. फिर क्या था।मित्रों ने फगुओ की झड़ी लगा दी।

"झमाझम बाजि रही पैजनियां
बन का निकरी गये दोऊ भाई
रथ का निरखत जात जटाय"
"वृंदावन देश देखाव रसिया"
आज मैं हरि से अस्त्र गहैइहौं"
राजन मानों बचन हमारो"
"सेजिया फूलों से अरघानी"

होली खेलें रघुबीरा अवध मा........और न जाने कितने गीत भाइयों ने गाये।दादा जब कान में उंगली लगाकर गाते हैं तो लगता वह गाते-गाते खो जाते हैं।लगता कि हम दिल्ली में नहीं अपने गाँव में हैं। अब जो शुरुआत हुई है वह होली के आठ दिन बाद तक चलेगी,जिसे आठों कहते हैं।

दिल्ली में विशेष रूप से जहाँ इस समय मैं हूँ नांगलोई में व उसके आसपास हजारों की संख्या में रायबरेली,अमेठी,सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, फतेपुर , इलाहाबाद और बाराबंकी आदि के लोग रहते हैं। आज से बारी-बारी से हमारे सबके घरों में ढोलक बजेगी और फगुआ का क्रम चलता रहेगा। चाय-नमकीन,चिप्स-पापड़,गुझिया,कहीं-कहीं भांग का शर्बत मिलेगा। अबीर लगेगी। इसके साथ न..न करते-करते कोई रंगबाजी कर ही देगा। इस हल्की सर्दी में रंग पड़ने पर झूठी नाराजगी दिखाते हुए अगले दिन हम सब फिर किसी पुरबिहा के घर मिलेंगे और वही फगुओं की बौछार शुरू...

अभी हम लोगों ने इस परंपरा को जीवित रखा है। आशा है भावी पीढ़ी भी इस परंपरा को आगे बढ़ाएगी।

अखिलेश द्विवेदी

बात बचपन की है और बचपन की घटनाएं दिल में अमिट छाप छोड़ जाती हैं। हम पंजाब के आदंपुर वायुसेना कैंप में बसे हुए थे जब मैं सात साल की थी। हम तमिल भाषी होली नहीं मनाते थे पर चारों तरफ होली का माहौल था। उस दिन मुझे याद है कि मैं सफेद रंग का नया फ्राक पहनी हुई थी जिस पर पोल्का डाट्स का डिसाइन था। मेरी मम्मी ने मुझे दुकान से कुछ खरीद लाने को भेजा और मैं निकल पड़ी। मैं रास्ते में हो रहे होली के खेल का मजा उठाती जा रही थी। कैसे लोग एक दूसरे पर बड़ी- बड़ी पिचकारियों रंग बरसा रहे थे और चेहरे पर भी अनेक रंग पोत रहे थे। जहां- तहां खड़ी होकर मैं यह देखती हुई धीरे- धीरे दुकान के करीब जा ही रही थी कि अचानक यह क्या किसी ने मुझे देख लिया और मुझ पर रंग लगाने आ गए। मैं इसे देख बिल्कुल डर गई। पर इतनी अचंभित हुई कि मैं भागने की कोशिश कर वहीं खड़ी रही। कोई मेरे चेहरे पर रंग लगाने लगा , कोई भरी पिचकारी से मुझ पर बौछार करने लगा और हद हो गई जब किसी से रंग भरे पानी की बाल्टी मेरे सिर पर उंडेल दी! मैं बिल्कुल हतप्रभ - सी रोने लगी और भीगी बिल्ली की तरह घर आ पहुंची। मेरी मां मुझ पर अत्यंत गुस्से में थी कि रसोई के लिए अत्यावश्यक सामान जल्दी लाने को कहा पर इसने इतनी देरी कर दी। घर के अंदर घुसते ही जब उन्होंने देखा कि मेरा नया पोशाक रंगों से बिगड़ गया है, उनके क्रोध का पारा चढ़ गया। फिर क्या था, लट्ठ मार भी हो गई! वह भी मेरे पीठ पर! पहले से ही रोनी सूरत बनी हुई थी , अब दर्द के मारे खूब रोई जब मेरा कोई कुसूर नहीं था!
मेरी मां को कौन समझाए कि होली खेलते लोगों से बच निकलना असंभव था? बस जो हुआ सो हुआ! पर आज भी यह होली अविस्मरणीय बन पड़ी है। हैप्पी होली!

जमना कृष्ण राज

लाल गुलाब

काश! तेरे हाथों में एक लाल गुलाब हो,
जिसकी सुर्खी से मेरा जीवन माहताब हो।

तेरे सीने पर सिर रखकर सोई रहूँ,
मधुर मिलन के सपनों में खोई रहूँ,
प्रेम की पहली पाती लिखूँ मैं तुम्हें,
मेरी बेचौनियों के जिनमें जवाब हो।
काश! तेरे हाथों में एक लाल गुलाब हो...

मिलते रहें हम तुम प्रेम के नगर में,
तमन्नाओं के आँगन में,हसरतों के घर में,
मैं लता की तरह तुमसे लिपटी रहूँ,
मेरे पास तेरे दिल का तोहफा नायाब हो।
काश! तेरे हाथों में एक लाल गुलाब हो...

सुहाग कक्ष हो खुश्बुओं से सरोबार,
सारे मीठे सपने हो जायें साकार,
शब्दों की माला तुम पिरोते रहो सनम,
तेरे हाथों में मेरे मन की किताब हो।
काश ! तेरे हाथों में एक लाल गुलाब हो....

चाहतों की बारिश में उम्र गुजरे तमाम,
प्यार करते रहें सनम से सुबह और शाम,
सुनते रहें हम तुम धडकनों की सदा,
मुकम्मल हो जिन्दगी, पूरे सभी ख्वाब हो।
काश! तेरे हाथों में एक लाल गुलाब हो...

प्रीति चौधरी मनोरमा
जनपद बुलन्दशहर
उत्तरप्रदेश

ईश्वर महान

साथियों, आओ ईश्वर का धन्यवाद करें,
भक्ति, शक्ति से, जीवन को आबाद करें।
ईश्वर ने यह सुंदर जिंदगी दी है हमको,
परमात्मा प्रतिज्ञता का एहसास करें।
साथियों, आओ..................

ईश्वर महान् हैं, और त्रिलोक के स्वामी,
ईश्वर सर्वशक्तिमान हैं और अन्तर्यामी।
खुशी मांगे भिक्षा में, अपने मालिक से,
तन मन से दूर हम, सारा अवसाद करें।
साथियों, आओ................

ईश्वर करते सदा, हम सबकी देखभाल,
इस सुंदर सृष्टि का, रखते पूरा ख्याल।
हर दुख दर्द से इंसान को उबाड़ लेते हैं,
खुद को दुर्गुणों, व्यसनों से आजाद करें।
साथियों, आओ.....................

प्रभु की कृपा से सूरज, चांद निकलते,
वन उपवन, प्यारे प्यारे फूल खिलते।
अथाह सागर से नदियां भी मिलती हैं,
अंतरात्मा से हम ईश्वर जिंदाबाद करें।
साथियों, आओ................

ईश्वर एक है, जगत पर है सर्वाधिकार,
जो मानता है, पाता है ईश्वर का प्यार।
ईश्वर हमारे मन मंदिर में ही रहते हैं,
खुद को भूल, एकबार उनको याद करें
साथियों, आओ........................

– राजेश सतपते,
उप्पूगुडा, शिवाजी नगर,
हैदराबाद

यादों की होली

मैं कल शाम होलिका पूजन के बाद रखी गई पूजन थाली को पूजा घर से उठा ही रही थी।सुबह के 10रू00 ही बजे थे कि अचानक मुझे स्वर सुनाई दिया ष्बुरा न मानो होली हैष् मैंने अपने घर की बालकनी से झांककर देखा तो हाथों में रंग गुलाल लिए कोई चार पांच लड़कियां गपियाती बतियाती हुई चली जा रहीं थीं। उनके हंसी के स्वर रूपी पिचकारियों से होली का रंग और वातावरण अधिक रंगीन हो चला था ।अपनी ही मस्ती में मस्त उनके हसीन चेहरे पर सजकर रंग-गुलाल स्वयं पर इतरा रहे थे ।

उनको देखते- देखते मेरे मन को भी अपने पुराने दिन और शरारतें ताजा हो आए। एक-एक करके होली के रंगों से रंगे -पुते अपनी सखियों के चेहरे रह-रहकर आंखों के समक्ष उभरने लगे ।कुछ ही समय में मेरी स्मृतियों में से निकलकर मेरी सखियां ममता, सीमा, सुधा ,सविता, नीलम ,कल्पना सभी एकत्रित हो गई ।होली के हुड़दंग में उस समय लड़कियों का घर से बाहर निकलना और होली खेलना वाकई किसी बहादुरी से कम नहीं था ।हमारे समूह में सबसे बहादुर हमारी सखी सविता ही थी, जो सबसे पहले अपने घर से मेरे घर तक की अनुमति लेकर घर से बाहर निकलती थी और उसके बाद एक-एक करके हम सब जुड़ते जाते थे और अपनी शरारतें होली के रंग में घोलकर होली को और भी यादगार बना दिया करते थे ।

एक आदत हम सबकी एक जैसी ही थी हमें इंतजार कर- कर के नहाए हुए स्वच्छ चेहरों पर रंग लगाने में बड़ा आनंद मिलता था। रंग लगवाने के लिए प्रतीक्षारत सखियों को रंगने में भला हमें क्या आनंद मिल सकता था क्योंकि वे बिना डरे, बिना भागे ,बिना चिल्लाए ही बड़ी सरलता से हमारे हाथों रंग लगवा लिया करती थीं भला ऐसा समर्पण हमें कहां रास आने वाला था !!हमारी शरारत भरी योजनाओं का ताना-बाना तो कई दिनों पहले से ही रचा जाता था और अब की बार अभिमन्यु कौन होगा!! यह भी पूर्व नियोजित कर लिया जाता था ।पिचकारी हमारे लिए किसी काम की नहीं थी हमें तो बाल्टी से, नल के बहते हुए पानी से और पानी में से भरी हुई टंकी में ,टांगाटोली करके एक दूसरे को पटकने में ही बड़ा आनंद मिलता था मेरी एक सखी कल्पना होली के रंगों से बहुत परहेज करती थी। क्योंकि उसके गोरे से मुखड़े पर रंगों से एलर्जी हो जाया करती थी परंतु हम जैसी रंगीन सखियों के रहते आखिर उसकी होली रंगहीन कैसे रहती !!हम सभी सहेलियां सबसे आखिर में शाम होते -होते उसके घर पहुंचते और सबसे मासूम से चेहरे वाली उसकी प्रिय सखी मैं उसे विश्वास में लेकर श्केवल गुलाल ही लगाएंगेश् कहकर कमरे से बाहर निकाल पाने में सफल होती थी। बड़ी मनुहार करने पर उसके कमरे से बाहर निकलते ही अपनी-अपनी पोजीशन पर तैनात सैनिकों की भांति मेरी सखियां सूखे पक्के रंग की पूरी डिब्बी उस पर उंडेल देती और फिर उसके सिर पर बाल्टी भर पानी डाल देती । उसके बाद उसके गुस्से का फव्वारा पूरे वेग से हम पर फूट पड़ता था ।पर मजाल है, हममें से किसी ने भी एक बार भी उसकी बात का कभी बुरा माना हो क्योंकि हमें मालूम था चंद दिनों की नाराजगी दिखला कर आखिर श्हसीना मान ही जाएगी।श

निरुपमा त्रिवेदी , इंदौर
स्वरचित अप्रकाशित

वह भी क्या होली थी

होली पर्व का नाम सुनते ही हमारी आँखो के सामने रंग - बिरंगे गुलाल और अबीर तैरने लग जाते है। होली पर्व पर बनने वाली गुछिया, पापड़, चिप्स और मठरी जैसे पकवान को याद करके हमारे मुँह में बरबस पानी आ जाते है।

पहले के समय की होली पर्व की बात ही कुछ और थी। बचपन में हम सभी होली पर्व का इंतजार महिनो पहले से ही शुरू कर देते थे। पहले घरो की महिलाएँ महिनो पहले ही पापड़, चिप्स बानने की तैयारियाँ करने लगती थी। हमारा परिवार ष्संयुक्त परिवारष था, और घर की सभी औरते आलू की लोई को रोटी का आकर देकर उसे धूप में सुखने को डालती थी, और हम घर के सभी बच्चे आलू की लोई के लालच में धूप में पापड़ सुखाने को डालते थे, और अंत में बची आठ दस लोई हम सभी चचेरे भाई बहनो में बाँट दिए जाते थे। जिसे हम खाकर खुशी से झूम जाते थे।

पहले सिले सिलाए कपड़े खरीदने का रिवाज कम ही था और कपड़े खरीद कर होली से 10-15 दिन पहले कपड़े की नपाई के लिए दर्जी के पास जाते थे। होली पर्व के एक दो दिन पहले ही हमें अपने कपड़े दर्जी से कमीज और पैंट के रूप में सिलकर मिला करते थे।होली वाले दिन हम सभी बच्चे सुबह - सुबह ही सबसे पहले घर के बड़ो से अपने पूरे शरीर पर तेल मालिश करवाते थे ताकि बाद में कोई रंग चढ़ न सके और नहाने पर रंग आसानी से उतर जाए। तेल मालिश करवाने के बाद हम सभी बाल्टीयो में रंग घोलते थे, और अपनी पिचकारी लेकर घर के दरवाजे या घर के छतो से अपने गली से गुजरने वाले हर व्यक्ति पर पर रंग डाला करते थे। जब हम लोगो को कोई नही मिलता था तो घर के सामने से गुजरने वाली गाय और भैंसो पर ही अपनी पिचकारियों से रंग डालकर अपनी खुशी पूरी किया करते थे। जब दो - ढाई घंटो बाद हम थक जाते थे तो आखिर में सभी भाई बहन एक दूसरे के चेहरो को लाल,काले पीले, नीले रंगो से रंग दिया करते थे। वो भी क्या होली थी ? उसका मजा ही कुछ और था। जिसे याद करके चेहरे पर भीनीभीनी मुस्कान आ जाती है।

पहले के समय गाँव में ही नही शहरो में भी लोग टोली ख्समूहऋ बनाकर एक दूसरे के घरो में होली मिलने जाते थे। ऐसे ही हमारे यहाँ भी हमारे मुहल्ले के सभी लोग आते थे। हमारे घर वाले भी उनके आने की तैयारी पहले से किए रहते थे। होली पर बनाए जाने वाले सभी पकवान पहले से ही ढेर सारी प्लेटो में तैयार रखे जाते थे। पकवान के साथ पान के ढेर सारे ष्बीड़ेष घर में ही बनाकर तैयार रख दिए जाते थे। जब टोली के रूप में लोगो का समूह हमारे घर आता था तो विशेष रूप से हम बच्चो में समूह के बड़ें - छोटे सभी से गले मिलने के लिए उत्सुकता रहती थी, और बड़े- बुजुर्ग भी हम बच्चो की भवनाओ को समझते हुए हमसे गले मिल लिया करते थे। हम बच्चे इस बात का ध्यान दिए रहते थे कि कोई भी गले मिले बिना जा न पाए। जब टोली के सभी लोगो का घर के सभी सदस्यों से होली मिलन हो जाता था। तब वे आगे के दूसरे घरो में होली मिलन के लिए चल दिया करते थे। समूह के साथ हमारे घर के कुछ सदस्य भी समूह में सम्मिलित हो जाया करते थे। इस प्रकार होली मिलन का कारवां बढ़ता चला जाता था।

पहले के समय ष्वो भी क्या होली थी।ष जिसे याद करके ही रोमांचित हो जाया करते है। आज के समय ये सब देखने को आँखे ही तरस जाती है। होली के वो पुराने दिन अब सिर्फ हमारी यादो में ही सिमट कर रह गये है।जो अब सिर्फ हमारी अतीत का हिस्सा है। अब तो बस मन यही कहता है कि 'कोई तो लौटा दे वो पुराने दिन'।

रोहित मिश्र, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश
मोबाइल नंबर 7523036082

लाकडाउन वरदान

पंचशील नगर झुग्गी बस्ती शहर की सबसे पुरानी झुग्गी बस्ती है। इसके दाहिने छोर पर सबसे अंत में बनी है राधाचरन की झोपड़ी। पीछे की ओर नाला बहता है । उसके किनारे नगर निगम द्वारा रोपे गए पोधों ने अब पेड़ों का रूप धारण कर लिया है । थोड़ी सी खाली जगह है हालाँकि उसे खाली जगह कहना नाइंसाफी है । बस्ती के लोगों ने उसे घूरे में तब्दील कर दिया है । तीन-चार समूहों में बँटे घूरों ने सारी खाली जगह को अपने कब्जे में लिया हुआ है और उन घूरों पर भी कुछ सुअरों का कब्जा है । सारे दिन ये सुअर घूरों को उलट-पुलट करते रहते हैं और अजीब सी आवाजें निकालते रहते हैं ।

ये कुछ माह पुरानी तस्वीर है । आज वह खाली जगह घूरों से मुक्त है और सुअरों ने भी नाला पार कर दूसरी ओर अपना बसेरा बना लिया है । खाली जगह में क्यारियाँ बनाई गई है और उनमें फूलों के पौधे रोपे गए हैं । यह सब किया है राधाचरन, उसकी बीबी बेनी और उसके बच्चों मोहन और रानी ने । पिछले कई दिनों से घर में कैदियों की तरह रहते हुए राधाचरन ने पहली बार महसूस किया था कि उसका परिवार किस तरह गंदगी के बीच जीवन यापन कर रहा है और क्यों बार-बार बीमारी उसके घर पर दस्तक देती रहती है । जिन साहब लोगों के बंगलों पर वह बगीचों का रख-रखाव करने जाता था वहाँ उसे बिना हाथ धोए खुरपी, फावड़े तक छूने की इजाजत नहीं थी लेकिन घर पर वह इस नियम का पालन न खुद करता था और न ही बच्चे । मोहन सुबह आसपास की कालोनियों में पेपर बाँटता था और दिनभर बस्ती के छोकरों के साथ मटरगस्ती करता था । सातवीं में दो बार फेल चुका था सो उसने स्कूल जाना ही छोड़ दिया था । बारह साल की रानी चौथी में पढ़ती थी और घर के कामों में हाथ बँटाती थी । बेनी नर्मदेश्वर क,लोनी के तीन घरों में झाड़ू-पौंछा करने और बर्तन माँजने का काम करती थी । तीन लोग कमाते थे पर घर की गाड़ी मुश्किल से ही चल पाती थी । घर में आए दिन राधाचरन और बेनी में झगड़ा होता रहता । राधाचरन घर की जिम्मेदारियों से जी चुराता रहता और देर रात को बेसुधी में घर लौटता । कई बार उसे खाना खाने की भी सुध नहीं रहती थी और औंधे मुँह चारपाई पर गिरकर खर्राटे मारने लगता । रानी बापू को इस हालत में देखती तो खुद में सिमट कर रह जाती । मोहन को ज्यादा फर्क नहीं पड़ता । राधाचरन भी उससे कुछ बोलने की हिम्मत नहीं जुटा पाता, वह पलट कर जवाब दे देता ।

उस दिन राधाचरन अपनी नई-नवेली बगिया में मिट्टी की गुड़ाई कर रहा था कि उसका लंगोटिया यार माखन आ गया । वह दो दिनों से राधाचरन को फोन कर रहा था और ठेके पर आने के लिए कह रहा था पर राधाचरन हाँ कह करके भी वहाँ नहीं पहुँचा था सो सुबह-सुबह वह राधाचरन का हालचाल पूछने चला आया था । दूर खड़ी डरी-सहमी सी रानी राधाचरन को कातर निगाहों से देख रही थी ।

लाकडाउन लगे एक सप्ताह बीत गया था । हमेशा देर रात लड़खड़ाते हुए ठेके से लौटने वाला राधाचरन एक हफ्ते से घर में ही बंद था । चारपाई पर पड़े-पड़े बीड़ी फूँकता रहता । ऐसा लगता जैसे सारे बदन में भारी-भारी पत्थर बाँध दिए गए हों .. हिलता-डुलता तो कराह निकल जाती, लगता शरीर में जान ही नहीं बची है । मोहन एक दिन बस्ती में चक्कर लगाने गया तो लौट कर ढेर सारी खबरें बटोर लाया । परसों सत्तन चाचा चौराहे तक गए थे कि पुलिस ने पकड़ कर उन्हें ऐसे डण्डे मारे कि अब न लेटते बन रहा है और न बैठते । नूर के अब्बा को बस्ती के ही कुछ लड़कों ने यह कहते हुए पीट दिया कि “तेरी बिरादरी की बजह से हमारी जान सांसत में आ गई है । अपनी खैर चाहते हो तो बस्ती छोड़कर चले जाओ ।” नेतराम को कल रात पुलिस

पकड़ कर ले गई है, वह विधवा रमा काकी के घर में घुस गया था । उनने शोर मचा दिया और बस्ती में गश्ती पर निकली पुलिस ने आवाज सुनकर उसे दबोच लिया । और भी खबरें थी उसके पास पर उसने बतायी नहीं । उसके दोस्त अच्छन को बाला के साथ उसके ही कुछ दोस्तों ने शाम को नाले में लोटा लिए एक साथ उतर कर पुलिया की ओर जाते देखा था । रामदीन का पोता निहाल तीन दिनों से सुखदेव की झोपड़ी में सोने जा रहा था । सुखदेव कुछ समय पहले ही 376 में जेल की हवा खाकर लौटा था ।

वैसे ऐसी खबरें उस बस्ती में आम थीं । गाली-गलौच, लड़ाई-झगड़े, मार-पीट और छेड़-छाड़ के किस्से तो हर दिन ही सुनाई देते थे । अवैध और समलैंगिक सम्बंधों के किस्सों की भी कमी नहीं थी । कुछ स्त्रियों का नाम तो जिन घरों में वे काम करने जाती थीं उनके साहब लोगों से भी जुड़ा हुआ था । पर राधाचरन और बेनी इन सब मामलों से दूर थे । उनके बारे में कभी बस्ती में कोई गलत बात सुनने को नहीं मिलती थी । राधाचरन को दारू पीने की लत जरूर थी पर उसने कभी किसी गैर स्त्री को बुरी नजर से नहीं देखा था । बेनी भी अपने काम से काम रखती, बेमतलब घर से बाहर कम ही निकलती । घर में झगड़ा केवल राधाचरन की दारूखोरी को लेकर ही होता ।

"बापू ऐसे ही चारपाई पर पड़े रहोगे तो बीमार पड़ जाओगे", हिम्मत कर रानी ने राधाचरन से कहा था, "हमारी मास्टरनी दीदी ने कहा था कि शरीर से काम न लिया जाए तो उसमें जंग लग जाती है । बापू कुछ काम किया करो", "क्या करूँ मैं? कहीं बाहर जा नहीं सकता, तुमने सुना नहीं मोहन ने क्या कहा था, सत्तन जरा सा बाहर निकला था कि पुलिस ने उसे बेरहमी से पीट दिया"। राधाचरन ने अपनी व्यथा व्यक्त की लेकिन बेटी के शब्दों ने उसके अंदर के आदमी को झकझोरने का काम कर दिया था । वह दिनभर पड़ा-पड़ा सोचता रहा, रानी सही ही तो कह रही है । कब तक पड़ा रहेगा ऐसे ही । कुछ काम नहीं करेगा तो आगे भी हिम्मत नहीं होगी कुछ करने की । आलसी बन जाएगा । पर क्या करे वह ? बेनी की खाना बनाने में मदद करे, बर्तन धोने में हाथ बँटाए, कपड़े धोने का काम करे या .. कुछ सोच नहीं सका । सुबह रानी से ही पूछेगा, क्या है उसके मन में, क्या उसके लायक कोई काम सोच रखा है उसने ?

रानी से पूछा तो रानी सोच में पड़ गई । वह इस प्रश्न के लिए तैयार नहीं थी । तभी पीछे से सुअरों के लड़ने की आवाजें सुनाई देने लगी तो वह चहक उठी जैसे पारसमणि हाथ लग गई हो, बोली - "बापू, अपन पीछे की जगह साफ करके उसमें फूल उगाएँगे । तुम ये काम जानते भी हो तो अच्छे से कर लोगे । फुरसत के समय में मैं और अम्मा माला बनाया करेंगे और दादा उसे बेचा करेगा ।" "मुझे पुलिस से पिटना नहीं है, मैं माला-वाला नहीं बेचूँगा", मोहन ने आपत्ति दर्ज कराई । "दादा, फूल उगने में ही दो-तीन माह लगेंगे तब तक सब ठीक हो जाएगा .. और तुम अभी अखबार डालने जाते हो कि नहीं, तुम्हें पुलिस ने मारा कभी"?राधाचरन ने हामी भर दी । उ स ी दिन से उसने और रानी ने साफ सफाई का काम शुरु कर दिया । एक हफ्ते में सारे घूरों की सफाई हो गई । नाले में पानी नहीं था सो उसकी भी सफाई कर दी गई । नाले की मिट्टी बागवानी के लिए उपयोगी थी सो उसे अलग रख लिया गया । घूरों की सफाई होते ही सुअरों ने नाले के उस तरफ अपना डेरा बना लिया । अगले एक सप्ताह में क्यारियाँ बन कर तैयार हो गई । मोहन के जिम्मे हैण्डपम्प से पानी लाने का काम था । बेनी शुरु में तो अनमनी दिखी लेकिन फिर काम में हाथ बँटाने लगी । लाकडाउन का पहला चरण खत्म होते-होते क्यारियों में अंकुर फूटने लगे थे । असमय हुई वर्षा ने भी उनके इस कार्य को सुगम बना दिया था । राधाचरन को पहली बार घर का काम करते हुए संतोष की अनुभूति हुई, अपनी जिम्मेदारियों का एहसास हुआ ।

मोहन भी अपने आवारा दोस्तों की संगत से दूर होने लगा । घर का वातावरण एकदम से बदलने लगा । दारू पीकर राधाचरन के आने से घर में जो तनाव पसर जाता था, अब उस तनाव की हलकी सी परछाई भी दिखाई नहीं देती थी । राधाचरन और बेनी के बीच में होने वाला झगड़ा भी नहीं के बराबर रह गया था । बेनी को मात्र शारीरिक क्षुधा शांत करने की मशीन मानने वाले राधाचरन को उसमें एक सुंदर, सुडोल औरत दिखाई देने लगी थी । रात में अब वह उस पर हिंसक पशु की तरह टूटकर निढाल होकर नहीं सोता था, उसकी इच्छाओं का भी सम्मान करने लगा था । जिंदगी में इतने सारे बदलाव आ गए कि सभी एक-दूसरे के महत्व को महसूस करने लगे । बेटी की पिता से मुलाकात हो गई और राधाचरन की परिवार से । फुरसत के समय में चारों साथ बैठते और राधाचरन उन्हें रामायण व महाभारत की कहानियाँ सुनाता । कभी वह भी गाँव की रामलीला में निषादराज, जटायु और वानर का रोल किया करता था सो उसके पास किस्सों की कमी नहीं थी । मूड में आता तो बढ़ा-चढ़ा कर किस्से सुनाता रहता । रानी "खूब लड़ी मर्दानी" कविता गाकर सुनाती और मोहन बस्ती की खबरें लाकर देता । कभी-कभी चारों मिलकर कौड़ियों से अष्टाचंग या कन्ना गोटी खेलते । रानी ने कौड़ियों से पहली बार कोई खेल खेला था । इससे पहले तक वह कौड़ियों को पूजा की वस्तु ही समझती थी । अम्मा दिवाली के दिन अपने बटुए से कौड़ियों को निकाल कर उनकी पूजा किया करती थी और भाईदूज के बाद उठाकर बटुए में रखकर संदूक में रख देती थी ।

लाकडाउन है कि खत्म होने का नाम ही नहीं ले रहा था । बार-बार उसकी अवधि बढ़ जाती और बस्ती के लोग मन मसोस कर रह जाते । स्वच्छंद विचरने वाले लोगों को घर में रहना रास नहीं आ रहा था । राधाचरन के पास दोस्तों के फोन आते रहते और लाकडाउन को कोसते रहते । कोई कहता - "कितने दिन हो गए यार अपनी महफिल नहीं जमी", तो कोई आहें भरते हुए बताता - "दस दिन हो गए एक बूँद गले में नहीं गई, ननकू बैगा ने भी दारू की भट्टी बंद कर दी, महुआ नहीं बचा उसके पास" तो कोई चहकते हुए बताता, अपुन को ज्यादा फर्क नहीं पड़ रहा इस लाकडाउन से, नंदकिशोर को गुढ़, यूरिया और आक्सीटोसिन इंजेक्शन दे दो वह दस रुपए में एक पौआ दे देता है, बड़ी अच्छी रहती है उसकी दारू, चढ़ती भी बहुत है, बस तुम्हारी कमी खलती है ।

शुरु-शुरु में दोस्तों की बातें राधाचरन को विचलित करती थीं, उसका गला सूखने लगता और मन में अजीब सी छटपटाहट होने लगती । इच्छा होती घर के कनस्तर में रखे गुड़ को लेकर भाग जाए और ननकू से एक-दो आधा बनवा कर ले आए । समय बीता तो छटपटाहट कम होती गई । अपनों के साथ समय गुजरने लगा तो पिछली जिंदगी की परछाइयों से मन मुक्त होने लगा । परिवार में मन रमने लगा, जिंदगी रास आने लगी । क्यारी में खिले गेंदे के पहले फूल को देखकर मोहन का जन्म याद आ गया, वैसा ही सुकुमार और गुलगुला । कुछ दिनों बाद बगिया में गेंदे और गुलाब के फूल लहलहाने लगे । अब क्या करें इन फूलों का ? विकट प्रश्न था । बाहर बेचने जाने में पिटाई का खतरा था ही, मोहन पहले ही मना कर चुका था । सोचा तो रास्ता भी निकल आया । तय हुआ जिन घरों में मोहन अखबार बाँटने जाता है उन घरों में पूछकर पूजा के लिए फूल और बेलपत्री की पुड़ियाँ बनाकर सप्लाई की जाएँगी । नाले के किनारे लगे बेल के पेड़ से बेलपत्री की व्यवस्था होने लगी । कुछ दिनों में सप्लाई की व्यवस्था जम गई, चार फूल और तीन बेलपत्री की एक पुड़िया पाँच रुपए में । शुरु में दस-बारह घरों से आर्डर मिला फिर एक हफ्ते में ही यह संख्या चालीस तक जा पहुँची ।

परिवार की आय बढ़ाने में अपना योगदान देकर मोहन भी उत्साहित था । बस्ती के दूसरे लोग जब घर में पड़े-पड़े खाने-पीने तक को मोहताज होते जा रहे थे तब राधाचरन ने परिवार के लिए एक नियमित आय की व्यवस्था जमा ली

थी । सब खुश थे। लाकडाउन उनके लिए वरदान सिद्व हुआ था । लाकडाउन ने न केवल परिवार को जोड़ा था अपितु आत्मीयता के नए बंधन में बाँधा भी था । परिवार के महत्व को समझाया था, प्यार की ताकत को महसूस कराया था और रिश्तों की टूटती डोर को मजबूत बनाया था ।

लाकडाउन खुला तो लोगों की आवाजाही बढ़ने लगी । काम की तलाश में लोग घरों से बाहर निकलने लगे । ऐसे में खबर मिली कि सरकार ने शराब की दूकानें खोलने की मंजूरी दे दी है । सरकार की खाली तिजोरी शराब से भरी जाएगी, राधाचरन के लिए आश्चर्यचकित करने वाली खबर थी । मोहन के पास अक्सर एक-दो अखबार बच जाते । उनमें छपी खबरों से पता लगता कि लोग शराब के कितने दीवाने हैं । अनेक जगहों पर शराब की दूकानों के सामने लगी लम्बी-लम्बी लाइनों की तस्वीरें भी अखबार में छप रहीं थी । बस्ती से लगी आनंद और राजहर्ष कालोनी में कोरोना के कई मरीज मिलने से पूरा एरिया कंटोनमेंट जोन में शामिल था अतएव बस्ती को लाकडाउन जैसे हालातों से छुटकारा नहीं मिला था । इस अप्रत्याशित लाकडाउन से सबसे ज्यादा परेशान तो माखन और सुखदेव जैसे राधाचरन के दोस्त थे । उनकी परेशानी की मुख्य वजह बस्ती के बाहर बने अहाते का बंद रहना था । शहर में दारू के कई अड्डे खुल गए थे लेकिन वह बस्ती से बाहर नहीं जा सकते थे । प्यास लगी थी और नदी भी सामने थी लेकिन पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थी जो नदी तक जाने नहीं दे रही थी । दोनों राधाचरन को फोन करते और अपने दिल की भड़ास निकालते रहते - “यार, पहली बार किसी सरकार ने बेवड़ों पर भरोसा जताया है और हम हैं कि सरकार की कोई मदद नहीं कर पा रहे हैं .. हमारी बस्ती को किसी की नजर लगी है .. एक महीना हो गया .. अभी तक ससुरी .. क्या कहते हैं .. कंटोन .. अरे यार तुम समझ लो जुबान पर नहीं आ रहा है, हमारी बस्ती फँसी पड़ी है ।

रानी जब भी राधाचरन को अपने दोस्तों से बातें करते सुनती तो अंदर ही अंदर डर जाती । यह कल्पना कर ही उसका मन बेचौनी से भर जाता - “कहीं बापू फिर से पुराने वाले बापू न बन जाएँ जिनके घर में घुसते ही वह और अम्मा दहशत में आ जाते थे और कलह शुरु हो जाता था ।” वह प्रार्थना करती कि “लाकडाउन न खुले” । अभी-अभी तो उसने पिता क्या होते हैं, महसूस करना शुरु किया है । पिता जब खुश होते हैं तो घर की दीवारों को चहकते सुना है उसने । पिता जब उसके साथ खेलते हैं तो कौड़ियों में इंद्रधनुष खिलता दिखाई दिया है उसे । बगिया में जब काम करते हैं और पसीने से तर बतर हो जाते हैं तो उस पसीने से उन गुलाबों की खुशबू आती है उसे जिन्हें उनने रोपा है । अम्मा भी कितनी खुश रहने लगी है । पिता का साथ पाकर मुरझाए पीले कनेर की फूल सी दिखने वाली अम्मा दो-तीन महीनों में ही लाल गुलाबाँस के फूल सी खिल गई है । दादा भी बस्ती के आवारा छोकरों के चंगुल से बाहर आ गया है और घर की जिम्मेदारी संभालने लगा है । आनंद के इस संसार को पिता के दोस्त क्यों उजाड़ना चाह रहे हैं, वे क्यों हमारी खुशियों में ग्रहण लगाना चाहते हैं । क्या शराब इतनी जरूरी चीज है कि बापू फिर से दोस्तों के बहकावे में आकर हमें अपने हाल पर छोड़ देंगे । इस बार वह नहीं जाने देगी बापू को, किसी भी कीमत पर”।

21 दिन के अतिरिक्त लाकडाउन के बाद आसपास की कालोनियों में एक भी पोजीटिव केस नहीं निकला सो उन कालोनियों सहित पंचशील नगर बस्ती भी ग्रीन जोन में आ गई । ग्रीन जोन में आने के दो दिनों के भीतर ही आधा किमी दूर बना अहाता भी खुल गया । अहाता क्या खुला, बस्ती की मुसीबत आ गई । शाम से ही बस्ती में आम दिनों की तरह मर्दो की भारी-भरकम आवाज में दारी, हरामजादी, छिनाल सहित माँ-बहिनों वाली गालियों के शब्द हवा में छितराने लगे । बस्ती से डराने वाली खबरें आने लगीं । पैसे न देने पर नत्थू पनवाड़ी

ने अपनी बीबी का सिर दीवार से भिड़ा कर लहू-लुहान कर दिया था । मायाराम रात में दारू चढ़ाकर आया और नाले में गिरकर अपना पैर तुड़वा बैठा । वंशीलाल ने अहाते में ही किसी बात को लेकर बृजकिशोर की पिटाई कर दी और दीनदयाल रात भर बेसुध सुअरों के बीच पड़ा रहा ।

राधाचरन के पास भी दो दिनों में कई बार माखन और सुखदेव के फोन आ चुके थे । वह हाँ कह कर भी उनसे मिलने नहीं गया था सो उस दिन सुबह-सुबह ही गुस्से से उबलता हुआ माखन आ धमका था । राधाचरन उस समय घर के पीछे बगिया में था । द्वार पर रानी टकरा गई, बोली - “क्यों बापू को परेशान कर रहे हो चाचा, वह नहीं मिलना चाहते तुमसे तो क्यों पीछे पड़े हो उनके”? “लाड़ो तू अपना काम कर, बड़ों के बीच में न पड़”।माखन किंचित आँखें तरेरते हुए रानी से बोला। “राधे से बोल जाके, माखन आया है ।” “तुम जाओ चाचा, मैं नहीं बुलाती उनको”। रानी बोलते हुए घर के पीछे की चली गई ।“ए लड़की.” ,कहते हुए माखन भी रानी के पीछे चल दिया ।

“अरे माखन तुम .. कब आए यार”? माखन को वहाँ देखकर राधाचरन ने हाथ में पकड़ी हुई खुरपी वहीं छोड़ दी और उठ खड़ा हुआ ।“मैं तो सोच रहा था तुम्हारी तबियत खराब है सो देखने चला आया, पर तुम तो अच्छे भले हो .. अरे देखो खुद को, ये क्या हालत बना रखी है”? माखन बोला और फिर राधाचरन के नजदीक जाकर फुसफुसाया - “इन तीन-साढ़े महीनों ने बस्ती के मर्दो को बिल्ली बना दिया है, ठेके पर भी दो-चार को छोड़कर दो दिनों में कोई मिला ही नहीं .. वापस मर्द बनने में सालों को महीनों लग जाएँगे .. तू भी तो कई बार बुलाने के बावजूद नहीं आया, कहीं तू भी तो”?“छोड़ यार, कोई ओर बात करते हैं” - राधाचरन ने बात बदलनी चाही ।“पहले तुम ये बताओ, आज शाम को मिलोगे कि नहीं”? माखन ने तल्खी से कहा ।“यार, अभी तो जिंदगी का अर्थ समझ में आया है, मुझे माफ कर दे”। राधाचरन ने शांत रहने की कोशिश करते हुए कहा ।

“समझ गया सब, कुछ कहने की जरूरत नहीं है घुसा रह अपनी”, माखन, कोई भद्दी सी गाली देना चाहता था, पर बात अधूरी छोड़ कर भुनभुनाता हुआ चला गया । उसने एक बार भी न तो घूरों के बारे में पूछा और न ही गर्मी के मौसम में लहलहाते फूलों की ओर उसका ध्यान गया । माखन के जाते ही राधाचरन फिर अपने काम में लग गया ।

रानी दूर खड़ी-खड़ी सब देख रही थी । वह उड़ना चाहती थी .. पिता ने उसे गर्व करने का अवसर जो दिया था । उसने सिर उठाकर ऊपर की ओर देखा । अनंत आकाश के समूचे विस्तार में उसे पिता की आकृति दिखाई दी । वह बहुत देर तक अपलक आकाश को निहारती रही।

अरुण अर्णव खरे
दानिश नगर
भोपाल
मोबा 9893007744
ई मेलःarunarnaw@gmail.com

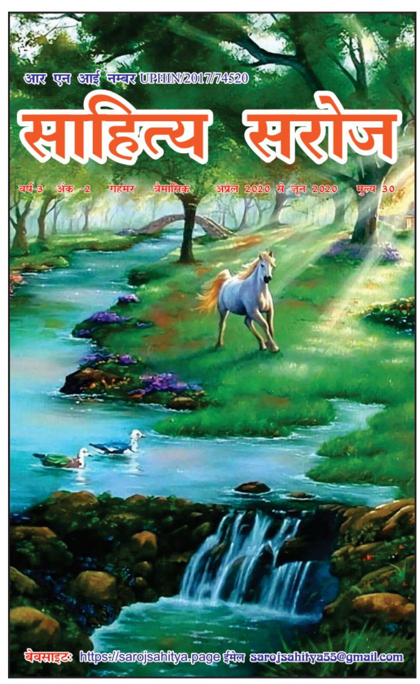

बच्चों के बौद्धिक विकास में अभिभावक की भूमिका

भारतवर्ष जो श्रृषि-मुनियों की तपोभूमि है। इस देश को कई नामों से जाना जाता है। इस धरा पर अनेक महापुरुषों आचार्यो ने जन्म लिया है। वर्धमान भगवान महावीर तथा भगवान महात्मा बुध जो कि लोगों को अहिंसा पर चलने के लिए प्रेरित करते हैं ।तो इसी धरा पर प्रकट होते हैं ।आचार्य चाणक्य द्धविष्णु दत्त शर्माॠ जो अपने विचारों से इतिहास और शासन की व्यवस्था ही बदल देते हैं। कहा जाता है शिक्षक साधारण नहीं होता प्रलय व निर्माण उसकी गोद में खेलते हैं ।और हमारे पालकों की सर्वप्रथम शिक्षक तो उसके अभिभावक ही होते हैं। अभिभावक जैसा चाहे वैसा ही अपने बालकों का भविष्य बना सकते हैं।

एक बालक का भविष्य कैसा होगा उसके अभिभावक की परवरिश पर निर्भर करता है ।कहते हैं मां बच्चे की प्रथम शिक्षक होती है। पर आज के परिवेश में मां के साथ पिता की भी भूमिका बहुत अहम हो गई है । हमारे जीवन का एक बहुत बड़ा हिस्सा बच्चे के लालन-पालन में व्यतीत हो जाता है। जो बच्चों की बुद्धि का विकास करते हैं ।

बच्चे अपने माता-पिता का अक्स होते हैं । जो व्यवहार हम करते हैं उसकी छवि हमें अपने बच्चों में साफ देखने को मिलती है। हमारे बच्चों का बहुर्मुखी विकास हो। इसके लिए हमें निम्न बातों पर विचार विमर्श करना होगा ।

१-सर्वप्रथम तो हमारा व्यवहार परिवार के अन्य सदस्यों के साथ प्रेम पूर्वक व धैर्य पूर्वक होना चाहिए ।अगर परिवार सिंगल है, तो कम से कम पति पत्नी को आपस में प्रेम और सौहार्द का वातावरण बनाए रखना चाहिए। क्योंकि बच्चा अपने आसपास जो दिखता है। वही अपने व्यक्तित्व में भी उतारता है।

२-हमें अपने बड़े होते बच्चों को अच्छे और बुरे स्पर्श की पहचान करानी चाहिए। जिससे वो भी घर के बाहर खुद की सुरक्षा कर सकें।गलत लोगों के संपर्क में आने से बच सकें।

३-हमारी बातों में करनी और कथनी में अंतर नहीं होना चाहिए। क्योंकि इससे बच्चे सच और झूठ के बीच अंतर करना नहीं सीख पाते। या यूं कह लें वह सही और गलत का मूल्यांकन नहीं कर पाते।

४-प्रत्येक अभिभावक को चाहिए कि वे अपने बच्चों में तार्किकता का समावेश करें ।जिससे की वे हर बात को तर्क के आधार पर जांच परख कर ही माने, ना कि अंधविश्वास की खाई में गिर कर अपने भविष्य के साथ खिलवाड़ कर पाए।

५-साहस और निडरता दो ऐसे गुण हैं। जो व्यक्ति के व्यक्तित्व को परिमार्जित करते हैं ।अतः अभिभावकों को चाहिए कि इन गुणों का समावेश धैर्यता के साथ अपने बच्चों में करें ।जिससे कि उनके बौद्धिक विकास में किसी भी प्रकार की बाधा उत्पन्न हो सके।

६-हमें अपने बच्चों पर अपनी मर्जी जरूर से ज्यादा नहीं थोपनी चाहिए । उन्हें शुरू से ही छोटी-छोटी जिम्मेदारी सौंपने चाहिए। जिससे आगे चलकर वे बड़ी से बड़ी जिम्मेदारी का निर्वाहन समझदारी व चतुरता से कर सके। जैसे- घर की छोटी-छोटी जिम्मेदारी उनको देनी चाहिए। कार्य पूर्ण होने पर उनका मूल्यांकन भी करना चाहिए। और उन्हें पुरस्कृत भी करना चाहिए।

७-शिक्षा के क्षेत्र में उन्हें आगे चलकर किन विषयों का चुनाव करना है इसका निर्णय भी बच्चों पर ही छोड़ना चाहिए । हां पर उन्हें हर बात की उचित और अनुचित जानकारी उपलब्ध कराने में अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करना एक अभिभावक की बड़ी जिम्मेदारी होती है।

८-परीक्षा के समय पर अभिभावकों को चाहिए कि परीक्षा की तैयारी किस्तों में करानी चाहिए जैसे - कठिन विषयों को पहले और सरल विषयों को अंत में, जिस से कठिन विषयों को विशेष रुप से समय मिल पाए।

अंत में एक बात -हमें अपने बच्चों को समय-समय पर यह एहसास दिलाते रहना चाहिए कि वह हमारे लिए अनमोल है ।वह हमारे लिए ईश्वर का दिया हुआ अमूल्य तोहफा है ।जिसके बिना हम अधूरे हैं ।ऐसे अभिभावक और बच्चों के बीच सामंजस्य से बना रहता है। और एक खूबसूरत रिश्ता बना रहता है। जो बच्चों के मानसिक व बौद्धिक विकास के लिए अभिभावक और बच्चों के बीच सेतु का कार्य करते

नीरज मिश्रा शुक्ला
उरई ,जालौन,
उत्तर प्रदेश

रिक्से वाले

एक बार एक अमीर आदमी कहीं जा रहा होता है तो उसकी कार खराब हो जाती है। उसका कहीं पहुँचना बहुत जरुरी होता है। तो उसको दूर एक पेड़ के नीचे एक रिक्शा दिखाई देता है। वो उस रिक्शे वाले के पास जाता है। वहाँ जाकर देखता है कि रिक्शा वाला अपने रिक्शे पर अपने पैर हैंडल के ऊपर रखे हुए है। पीठ उसकी अपनी सीट पर होती है और सिर जहा सवारी बैठती है उस सीट पर होती है । और वो मजे से लेट कर गाना गुन-गुना रहा होता है। वो अमीर व्यक्ति रिक्शा वाले को ऐसे बैठे हुए देख कर बहुत हैरान होता है कि एक व्यक्ति ऐसे बेआराम जगह में कैसे चौन से खुश रह सकता है। वो उसको चलने के लिए बोलता है। रिक्शा वाला झट से उठता है और 20 रूपए किराया बोलता है।

रास्ते में वो रिक्शा वाला गाना गुन-गुनाते हुए मजे से रिक्शा खींचता है। वो अमीर व्यक्ति एक बार फिर हैरान कि एक व्यक्ति 20 रूपए लेकर इतना खुश कैसे हो सकता है। इतने मजे से कैसे गुन-गुना सकता है। वो थोडा ईष्यालु हो जाता है और रिक्शा वाले को समझने के लिए उसको अपने बंगले में रात को खाने के लिए बुला लेता है। रिक्शा वाला उसके बुलावे को स्वीकार कर लेता है। वो अपने हर नौकर को बोल देता है कि इस रिक्शे वाले को सबसे अच्छे खाने की सुविधा दी जाए। अलग अलग तरह के खाने के वेरायटी दी जाती है। सूप्स, आइस क्रीम, गुलाब जामुन सब्जियां यानि हर चीज वहाँ मौजूद थी।

वो रिक्शा वाला खाना शुरू कर देता है, कोई प्रतिक्रिया, कोई घबराहट बयान नहीं करता। बस गाना गुन-गुनाते हुए मजे से वो खाना खाता है। सभी लोगो को ऐसे लगता है जैसे रिक्शे वाला ऐसा खाना पहली बार नहीं खा रहा है। पहले भी कई बार खा चुका है। वो अमीर आदमी एक बार फिर हैरान एक बार फिर हैरान हो जाता है, कि कोई आम आदमी इतने ज्यादा तरह के व्यंजन देखकर और खाकर भी कोई हैरानी वाली प्रतिक्रिया क्यों नहीं देता है ? और वो जैसे रिक्शे में गाना गुन-गुना रहा था। वैसे ही गाना गुनगुनाए जा रहा था। यह सब कुछ देखकर अमीर आदमी की ईर्ष्या से भर जाता है।

अब वह रिक्शे वाले को अपने बंगले में कुछ दिन रुकने के लिए बोलता है। रिक्शा वाला हाँ कर देता है। उसको बहुत ज्यादा इज्जत दी जाती है। कोई नौकर उसको जूते पहना रहा होता है, तो कोई नौकर कोट। एक बेल बजाने से तीन-तीन नौकर सामने आ जाते है। एक बड़ी साइज की टेलीविजन स्क्रीन पर उसको प्रोग्राम दिखाए जाते है। और एयर-कंडीशन कमरे में सोने के लिए बोला जाता है। अमीर आदमी नोट करता है कि वो रिक्शा वाला इतना कुछ देख कर भी कुछ प्रतिक्रिया नहीं दे रहा। वो वैसे ही साधारण चल रहा है। जैसे वो रिक्शा में था वैसे ही है। वैसे ही गाना गुन-गुना रहा है जैसे वो रिक्शा में गुन-गुना रहा था।

अमीर आदमी की ईर्ष्या बढ़ती ही चली जाती है और वह सोचता है कि अब तो हद ही हो गई। इसको तो कोई हैरानी नहीं हो रही, इसको कोई फर्क ही नहीं पड़ रहा। ये वैसे ही खुश है, कोई प्रतिक्रिया ही नहीं दे रहा है। अब अमीर आदमी पूछता हैरू आप खुश हैं ना? वो रिक्शा वाला कहता हैरू जी साहेब बिलकुन खुश हूँ। अमीर आदमी फिर पूछता हैरू आप आराम में हैं ना ? रिक्शा वाला कहता हैरू जी बिलकुन आरामदायक हूँ।

अब अमीर आदमी तय करता है कि इसको उसी रिक्शा पर वापस छोड़ दिया जाये। वहाँ जाकर ही इसको इन बेहतरीन चीजो का एहसास होगा। क्योंकि वहाँ जाकर ये इन सब बेहतरीन चीजो को याद करेगा। अमीर आदमी अपने सेक्रेटरी को बोलता है की इसको कह दो कि आपने दिखावे के लिए कह दिया कि आप खुश हो, आप आरामदायक हो। लेकिन साहब समझ गये है कि आप खुश नहीं हो आराम में नहीं हो। इसलिए आपको उसी रिक्शा के पास छोड़ दिया जाएगा।“ सेक्रेटरी के ऐसा कहने पर

रिक्शा वाला कहता है ठीक है सर, जैसे आप चाहे, जब आप चाहे।

उसे वापस उसी जगह पर छोड़ दिया जाता है जहाँ पर उसका रिक्शा था। अब वो अमीर आदमी अपने गाड़ी के काले शीशे ऊँचे करके उसे देखता है। रिक्शे वाले ने अपनी सीट उठाई बैग में से काला सा, गन्दा सा, मेला सा कपड़ा निकाला, रिक्शा को साफ किया, मजे में बैठ गया और वही गाना गुन-गुनाने लगा। अमीर आदमी अपने सेक्रेटरी से पूछता है "कि चक्कर क्या है। इसको कोई फर्क ही नहीं पड़ रहा इतनी आरामदायक, इतनी बेहतरीन जिंदगी को ठुकरा कर वापस इस कठिन जिंदगी में आना और फिर वैसे ही खुश होना, वैसे ही गुन-गुनाना।" फिर वो सेक्रेटरी उस अमीर आदमी को कहता है "सर यह एक संतुष्ट इन्सान की पहचान है। एक संतुष्ट इन्सान वर्तमान में जीता है, अधिक की चाह में में अपना वर्तमान खराब नहीं करता है।

अगर उससे भी बढ़िया जिंदगी उसे मिल गई तो उसका भी स्वागत करता है उसको भी जी भर जीता है और वर्तमान को भी खराब नहीं करता। और अगर जिंदगी में दुबारा कोई बुरे दिन देखने पड़े तो वो भी उस बुरे समय को भी उतने ही खुशी से, उतने ही आनंद से, उतने ही मजे से, जीता है ,और उसी में आनंद लेता है।"कामयाबी आपके खुशी में छुपी है, और अच्छे दिनों की उम्मीद में अपने वर्तमान को खराब न करें।

अजय मोटवानी
तिजारा अलवर

होली मनाएं

चलो फागुन की खुशियां मनाएं,
श्याम संग होली खेल आए।
चलो होलिका दहन हम कराएं
मिटा बुराई सच्चाई को जिताए
अपनों के संग होली मनाएं
घर आंगन को रंगों से सजाएं

चलो फागुन की खुशियां मनाएं,
श्याम संग होली खेल आए ।
देखो डाल डाल पर फूल खिल आए
पहाड़ों पर टेसू के रंग निखार आए
ढोल की थाप पर अपने पैर थिरकाए
घुंघरू, बांसुरी के संग गीत सुनाए

चलो फागुन की खुशियां मनाएं,
श्याम संग होली खेल आए ।
फागुन में हम फाग गुनगुनाए
अपनों के संग रंग, गुलाल उड़ाए
अपनी टोली के संग घूम आए
अपनों के संग के धूम मचाए

चलो फागुन की खुशियां मनाएं,
श्याम संग होली खेल आए ।
प्यार के रंग में हम घुल मिल जाए
छोड़ के नफरत प्रेम से रिश्ते सजाएं
बच्चों के संग बच्चे हम भी बन जाए
हर चेहरे पर मुस्कान सजाए

चलो फागुन की खुशियां मनाएं,
श्याम संग होली खेल आए ।
आशीष तेरा जो मिल जाए
जीत के दुनिया हम दिखलाएं
श्याम तू तो सबका कान्हा कहलाए
बजाना मुरली मनमोहन ले जाए

चलो फागुन की खुशियां मनाएं,
श्याम संग होली खेल आए ।
श्याम हम तेरे संग होली खेलने आए
तेरे प्रेम की भक्ति में हम डूब जाए
सारा जग जिस का दीवाना हो जाए
वह स्वयं को राधा का दीवाना बतलाए
चलो फागुन की खुशियां मनाएं,
श्याम संग होली खेल आए ।

वंशिका अल्पना दुबे बैंगलोर

आयरन लेडी

माँ, नाराज हो?''? राम सरन ने सुबकती हुई माँ के कंधे पर हाथ रखा। सती ने सिर उठाकर देखा। दोनों बेटे अपराधी बने सामने खड़े थे। वह तड़प कर कुर्सी से उठी और दोनों बाजू फैलाकर बेटों को कलेजे से लगा लिया। इस बार छोटे बेटे मोनू ने पूछा,"नाराज हो माँ"? हमने कुछ गलत किया क्या? उस आदमी को देखकर ही हमें गुस्सा आ गया था।'' "नहीं बेटा! तुम दोनों ने वही किया जो तुम्हें करना चाहिए था। फिर भी वह तुम्हारा बाप है और इस समय बिल्कुल लाचार है। कहाँ जाएगा? लोग दरवाजे पर आए जानवर पर भी दया करते हैं। बस यही सोच रही थी।'' "नाराज मत होना माँ! तुम कहती हो तो हम उसे वापस बुला लाते हैं, पर हमारे बाप की जगह तो वह कभी ले नहीं पायेगा न? तुम्हारी तुम जानो।'' राम सरन बोला। "पड़ा रहने दो उसे बाहर के कमरे में। दो रोटी खा लिया करेगा। क्या कमी है हमारे पास अब? उसे तो परमात्मा ने उसके कर्मों का फल दे ही दिया है।'' सती की आँखों में चमक आ गई और चेहरा खिल गया।

"ठीक है माँ! तुम कहती हो तो हम उसे खोज लाते हैं। तुम जी छोटा न करो। बस, खुश रहो। हमारे लिए तो तुम्हीं भगवान हो। चल मोनू।'' रामू ने भाई को बाजू से पकड़ा और माँ की खुशी के लिए उस बाप को तलाशने के लिए दोनों भाई दरवाजे से बाहर निकल गये, जो कभी उन्हें भूखों मरने के लिए बेसहारा छोड़कर किसी दूसरी औरत के पास चला गया था। बरसों बाद उसे अपने बच्चों और घर की याद तब आई जब उसे बीमार और लाचार हालत में कहीं कोई सहारा नही था। बीमारी के कारण नौकरी छूट गई तो वह दूसरी औरत भी सारा सामान बटोर रातो-रात कहाँ गायब हो गई पता ही नहीं चला।

आज मोनू अट्ठारह वर्ष का था और राम सरन बीस वर्ष का। केसर की इसी साल शादी कर दी गई थी। तब रामू दस साल का था और मोनू आठ का। छोटी केसर चार साल की थी जब उनका पिता दूसरी औरत के पास चला गया था। रोज की कच-कच में रामू सब समझने लगा था। बची कसर मुहल्ले वालों ने पूरी कर दीं। उन्हें रोज ही गली-मुहल्ले में सुनने को मिलता कि उनका बाप दूसरी औरत के साथ रहता है।

समय बीता, दादा भी चल दिए और अब घर में माँ बेटे ही थे। वे दोनों पढ़ भी रहे थे और माँ के साथ काम में भी हाथ बटा रहे थे। ऐसे समय में उस भगौड़े बाप को वापस लौटा देखकर दोनों का खून खौल उठा और वे माँ के कुछ कहने से पहले ही, धक्के देकर बाप को बहार निकाल चुके थे।

सती सोच रही थी, चूक कहाँ हुई होगी। उसने तो कभी सास-ससुर के सामने मुँह भी नहीं खोला था। बहुत पढ़ी-लिखी तो नहीं थी वह, फिर भी घर की मर्यादा का ध्यान तो उसे रहता ही था। हरी राम एक सरकारी कार्यालय में चपरासी था। क्या बांका गबरू था वह तब, जब सती ब्याह कर इस घर में आई थी। सती! सुरसती यानि सरस्वती जो मायके ससुराल में सती ही बनकर रह गई थी, जान ही नहीं पाई कि उसका गबरू कब दूसरी का हो गया। पता ही नहीं चला और घर में तीन बच्चे भी आ गए, पर इससे क्या? धीरे-धीरे हरी का समय कहीं और गुजरने लगा और इसके साथ ही कमाई भी पराई हो गई और घर में फाके होने लगे। इस समय तक सास गुजर चुकी थी। बेटे के रंग-ढंग देखकर ससुर ने दो कमरों का आधा कच्चा, आधा पक्का मकान बहू के नाम कर दिया। हरी राम कई दिन से अपने बापू पर दबाव बना रहा था कि मकान उसके नाम कर दे। उस दिन बाप-बेटे में इसी मुद्दे पर बहस हो ही गई,

''बापू.......''

''हूँ....!'' बापू ने हुक्के की नड़ी मुँह से हटाए बिना हुँकारा भरा।

''वो...मैं कह रहा था कि, तुम अब रोज ही बीमार रहते हो।''

''तो?''

''दो बहने भी हैं, मकान का कुछ कर देते तो......!'' उसने बात अधूरी छोड़ दी

''वो तो मैं कर चुका हूँ। कल ही तो कर के आया हूँ बहू के नाम। वैसे तुम क्या सोचते हो, मैं मरने वाला हूँ?'' बापू ने हुक्के से मुँह हटाते हुए जवाब दिया और फिर लापरवाही से हुक्का पीने लगा। हरी राम को यह उम्मीद बापू से कतई नहीं थी। पहले तो वह सकपकाकर बापू को देखता रहा, फिर एकाएक भड़क उठा,

''तुम्हें अपने बेटे से ज्यादा ये पराई लड़की प्यारी हो गई?''

"हाँ! अब तो है ही। मैं तुम्हारे रंग-ढंग देख ही रहा हूँ। दो-दो दिन घर नहीं आते। घर में खर्चा नहीं देते। यह नहीं सोचा कि घर के लोग कैसे जी रहे हैं। यह लड़की ही पराई है न? यह बाप तो तुम्हारा है और ये बच्चे भी तुम्हारे हैं। यह कच्चा-पक्का मकान ही सही, छत तो है हमारे सिर पर।'' कहकर बापू उठकर बाहर निकल गया।

हरी अपने बापू को अच्छी तरह जानता था। अब कुछ नहीं हो सकता, उसने अपना सारा गुस्सा सती पर निकाला। "हरामखोर! यह सब तेरा ही किया-धरा है। मेरे बाप को मेरे खिलाफ कर दिया। ले...'' और हरी राम के लात-घूंसे चलने लगे तो बच्चों ने चिल्लाना शुरू कर दिया। रामू रोते-रोते माँ के निकट गया तो एक लात उसके भी पड़ गई। सती अपना दर्द भूलकर रामू की तरफ लपकी। गुस्से में बुड़बुड़ाता हरी उसी समय से उस दूसरी औरत के साथ रहने लगा और लौटकर नहीं आया।गला सूखने लगा तो सती ने उठकर पानी पिया और फिर उसी कुर्सी पर आ बैठी जहाँ बेटे उसे छोड़ गए थे।

वह दिन चलचित्र की तरह उसके सामने नाच उठा जिस दिन हरी घर छोड़कर गया था। घर में राशन भी खत्म था और उसके पास कुछ बचा भी नहीं था। उसने सोचा था कि पति के घर आने पर वह उससे चिरौरी करके कुछ पैसे ले ही लेगी ताकि राशन ला सके, पर सब कुछ उलट-पलट गया। हरी ने जाते-जाते साफ कह दिया था कि वह अब कभी लौटकर इस घर में नहीं आएगा और वह नहीं आया।

उस दिन संध्या के भोजन के लिए जब उसने रसोईघर खंगाला तो मुश्किल से दो समय के लिए आटा और कुछ थोड़ी दाल बची थी। क्या करे, हरी के स्वभाव को वह जानती थी, कह गया है तो अब कभी नहीं आएगा। तीन बच्चे, ससुर और उसका स्वयं का पेट? क्या होगा अब..? फिर भी रात का भोजन बनाकर उसने जैसे-तैसे सब को खिलाया और एक रोटी खुद भी खाई।

झगड़ा होना यूँ तो रोज की ही बात थी पर हरी की वह घोषणा.? रात भर सती को नींद नहीं आई। उधर ससुर भी जाग रहे थे। वे भी अपने बेटे के जिद्दी स्वभाव के कारण चिंतित थे परन्तु वे यह भी जानते थे कि मकान हरी के नाम करने के बाद उन पाँचों प्राणियों को सड़क पर आना ही है।

समस्या की गम्भीरता को जानते हुए ससुर-बहू दोनों अपने-अपने खोल में चक्कर खा रहे थे। रात के बचे खाने से दिन का काम चलाना विवशता थी ताकि बचा राशन रात के काम आ सके। बच्चे क्या जाने क्या मुसीबत आई है, अचानक सती ने अल्मारी खंगालनी शुरू कर दी। पर अल्मारी में था क्या जो उसे मिल जाता। दरअसल कभी कभी बचे पैसे वह अल्मारी के किसी कोने में डाल दिया करती। वह उन्हीं को तलाश कर रही थी। सारे कोने खंगालने के बाद सती को कुछ सिक्के और दस-दस के दो नोट मिले। सती ने पैसे गिने, कुल मिलाकर वे पैंतालीस रुपए थे। सती ने वे पैसे सम्भालकर रुमाल में बाँध लिए, क्या होगा इससे?

शाम के पाँच बज गए थे, आज बापू ने भी चाय नहीं मांगी थी। ना ही सती को याद आया कि बापू को चाय देनी है। सती ने राशन के लिए थैला उठाया और बाहर निकल गई। चलते-चलते वह गली से बाहर निकल आई पर उसे यह समझ में नहीं आ रहा था कि वह करे क्या? इन पैंतालीस रुपयों में क्या होगा? उसे यह भी पता नहीं था कि वह जा किधर रही है। बस चल रही है उसे लग रहा था कि वह किसी के पीछे चली जा रही है। दिन बड़े थे इसलिए अंधेरा होने में अभी देर थी। बहुत समय हो गया था उसे चलते-चलते।

"अरे किधर जा रही हो बेटी, सामने देखो बैल आ रहा है। एक तरफ हटो।'' एक तरफ से आती आवाज ने उसे चौंका दिया। उसने सामने देखा, वह सब्जी मण्डी में खड़ी थी। तभी किसी ने उसे धक्का देकर एक तरफ हटा दिया, "नींद में हो क्या?'' उसने देखा एक बुजुर्ग से लगने वाले व्यक्ति ने उसे धक्का न दिया होता तो वह सामने से आते बैल के सामने पड़ जाती और बैल उसे मार भी सकता था। वह हारकर एक बंद दुकान के बाहर बैठ गई। वह बुजुर्ग उसके पास आकर बैठ गए। उन्हें लग रहा था कि सामने वाली महिला बहुत अधिक परेशान है।

"क्या हुआ बेटी? मैं कोई मदद कर सकता हूँ क्या तुम्हारी?'' "आँ, हाँ।......नहीं-नहीं। मैं ठीक हूँ।'' उसने अपने हाथ में पकड़े थैले को टटोला। उसे लगा कि शायद उसके पैसे न गिर गए हों। रुमाल को सलामत देखकर उसके चेहरे पर एक सुकून की रेखा दौड़ गई। जो तुरन्त ही वापस लौट

गई। वह फिर सोचने लगी कि इन पैसों का क्या होगा। ये तो चार दिन के राशन के लिए भी पर्याप्त नहीं हैं। निकट बैठे सज्जन ने फिर पूछा, ''सब्जी लेने आई हो क्या? हाँ! यह ठीक समय है। इस समय सब्जी सस्ती मिलती है। जाओ, ले लो। ये ठेले वाले घर जाने के लिए बची हुई सब्जी सस्ती दे देते हैं।'' कहकर वे एक तरफ हो लिए और सती एक ठेले के पास जा खड़ी हुई जिस पर थोड़े-से मटर रखे थे।

''कितने के दे रहे हो?''

''ले लो बहन। सारे दस रुपए में दे दूँगा। देखो एकदम ताजा मटर है।'' पर सती कुछ सोच नहीं पा रही थी। तभी ठेले वाला फिर बोला, ''चलो नौ रुपए दो।'' और उसने अन्यमनस्क-सी सती के हाथ से थैला ले लिया और सारे मटर उस में डालकर पैसों के लिए हाथ फैला दिए। सती ने बिना कुछ सोचे उसे नौ रुपए गिनकर दे दिए। मटर लेकर सती आगे बढ़ गई और कुछ और सब्जियाँ लेकर वापस लौटने लगी। पर अभी उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह इन सब्जियों का करेगी क्या?

जब वह सब्जी से भरा थैला लेकर घर लौटी तो ससुर भी परेशान हो गए। "बहू! क्या करोगी इतनी सब्जियों का?''

"पता नहीं।'' उसका उत्तर था। फिर वह रसोई में चली गई। बच्चे खाना मांगने लगे थे। वे तो बच्चे ही थे। लगता है उन्हें पिछले कल की बातें याद ही नहीं थीं। खाना बनने तक उसने बच्चों को मटर छीलने के लिए बैठा दिया। अब सती ने रात ही रात में पूरी सब्जियाँ धो-काट कर रख दीं। पर अभी भी उसे समझ में नहीं आ रहा था कि इन का वह करेगी क्या। पर अगली सुबह वह उन कटी सब्जियों को लेकर एक दूर के मुहल्ले में चली गई और घरों में जाकर उसने वे सारी कटी सब्जियाँ बेच दीं।

सौ रुपए हाथ में आते ही सती की जान में जान आई। मन में एक नई आशा का संचार हुआ। दूसरे दिन फिर वह सब्जी मण्डी में थी। अब ये हर रोज का नियम बन गर्या। घर में बच्चे और ससुर भी काम में सती का हाथ बटाने लगे। घर के खर्च की अब चिन्ता नहीं रही। थोड़े ही दिनों में सती को पूरे शहर से अग्रिम आर्डर मिलने लगे। काम बढ़ गया तो उसने मुहल्ले की कुछ लड़कियाँ सहायक रख लीं।

काम और बढ़ा तो सब्जियाँ बचने लगीं। अब सती ने अपने ज्ञान का उपयोग करना ठीक समझा और अचार बनाने लगी। कुछ ही वर्षो में सती के बनाये ताजे और स्वादिष्ट अचार की ख्याति फैलने लगी। आय बढ़ी तो घर भी पक्का हो गया और बच्चे भी निरंतर पढ़ते रहे। पूरे नगर में सती की कहानी बड़े आदर से सुनाई जाती और जहाँ भी वह जा खड़ी होती उसे भरपूर सम्मान दिया जाता। इसी बीच ससुर भी गोलोकवासी हो गए। बेटी का विवाह भी हो गया और जीवन व्यवस्थित हो चुका था। ऐसे में हरी राम का वापस घर लौटना उसे फिर से अस्त-व्यस्त कर गया।

उसने चौक कर देखा, काफी समय बीत गया था बच्चे लौटकर नहीं आए थे। पता नहीं कहाँ चले गए होंगे? बच्चों को भी थोड़ा तो सोचना चाहिए था। इतनी गर्मी नहीं दिखानी चाहिए न। उसके भीतर की पत्नी ने सिर उठाया तो एक आहत स्त्री ने तुरन्त ही उसका गला पकड़ लिया, "दूसरी स्त्री के लिए उसने क्या अत्याचार नहीं किया, भूल गई?'

"बहक तो कोई भी सकता है।' पत्नी ने दलील दी। तभी स्त्री ने कराहकर उसे हरी राम द्वारा की गई पिटाई से लगे घाव दिखाए। वह कराह उठी। उठकर कमरे में जाने लगी। लापरवाही के कारण दरवाजे से ठोकर लगी तो चौंक कर देखा गली में रामू और मोनू पिता को साथ लिए घर की ओर आ रहे थे। वह झटके से उठकर बाहर के कमरे का दरवाजा खोलकर वहाँ पड़ी खाट पर का बिस्तर ठीक करने लगी। तभी वह घायल स्त्री फिर फुफकार उठी। अब तक तीनों कमरे में पहुँच चुके थे।

"पटक दो इसे यहीं।'' वह बेटों की ओर घूमी, ''इसे कह दो, अन्दर आने की कोशिश न करे और इसके लिए पानी वगैरह रख दो। इसे लगा होगा कि हम इसके बिना भूखे मर जायेंगे। पर यह भूल गया था कि हमारे भी हाथ तो हैं न।'' और उसने आंगन का दरवाजा धड़ाक से बंद कर दिया।

आशा शैली
सम्पादक शैलसूत्र,
इन्दिरा नगर-2, लालकुआँ,
जिला नैनीताल-262402

माँ कामाख्या मंदिर - गहमर

एशिया के सबसे बड़े गाँव गहमर में स्थित आदि शक्ति माँ कामाख्या का मंदिर शक्ति पीठ में अलग महत्व रखता है। इस पवित्र भूमि में कभी जमदग्नि, विश्वामित्र, गाधि-तनय, इत्यादि ऋषी - मुनियों का सतसंग समागम हुआ करता था। विश्वामित्र ने यहाँ एक महायज्ञ किया था। मर्यादा पुरूषोत्म राम ने यहाँ से आगे बढ़ कर बक्सर में ताड़का नामक राक्षस का वध किया था ।

मंदिर की स्थापना के बारे में कहा जाता है कि पूर्व काल में फतेहपुर सिकरी में सिकरवार राजकुल पितामह खाबड़ जी महाराज ने कामगिरि पर्वत पर जा कर माँ कामाख्या देवी की घोर तपस्या की, उनकी तपस्या से प्रसन्ना माँ ने कालान्तर तक सिकरवार वंश की रक्षा करने का वरदान दिया। सन् 1530 में बाबर के साथ हुए मालवा युद्व में पराजित होने के बाद हताश एवं परेशान महाराज धामदेव को माँ ने काशी क्षेत्र में जाने एवं वही अपना निवास बनाने का आदेश दिया। माँ का आदेश मान कर राजा धाम देव फतेहपुर सिकरी से अपने पुरोहित गंगेश्वर उपाध्याय को साथ लेकर काशी क्षेत्र के लिए चल दिये।

उस समय यह पूरा क्षेत्र काशी प्रान्त कहा जाता था। आज भी यह क्षेत्र लहुरीक काशी के नाम से ही जाना जाता है। कहा जाता है कि काशी के इस क्षेत्र में चेरू राजा शशांक का शासन था, वह काफी क्रूर था उससे यहाँ की प्रजा काफी दुखी थी।धामदेव ने अपने साथ आये लड़ाको के साथ उसके साथ युद्व किया जिसमें शशांक पराजित हुआ।उसकी पराजय के बाद धामदेव राव ने यहाँ अपना राज्य स्थापित कर लिया। गंगा के पावन तलहटी में बसे इस क्षेत्र मे एक छोटा सा स्थान ऐसा था जो गंगा के बाढ़ के समय सुरक्षित माना जाता था,जिससे सकराडीह कहा जाता था। सकरडीह का मतलब ही होता है छोटा स्थान या तंग स्थान। धाम देव ने उस स्थान को हर तरफ से सुरक्षित मानते हुए वही माँ कामाख्या देवी की एक प्रतिमा नीम के पेड़ के पेड़ के पास मंदिर बना कर स्थापित कर दी।मंदिर में स्थापित प्रतिमा के योनी मंडल में माँ भगवती का साक्षात् निवास है। इस योनी मंडल के स्थापना के कारण यहा माँ कामाख्या का मंदिर कहा जाता है। यह मंदिर पहले कहाँ स्थित था, इस संबंध में लोगो में मतभेद है। कुछ का कहना है कि वर्तमान समय में बने डाक बंगले के पास यह मंदिर स्थापित था।कुछ लोगों का कहना है कि मंदिर शुरू से वही था जहाँ आज है।

समय के साथ- साथ माँ कामाख्या का महत्व बढ़ता जा रहा था। दूर-दराज से भक्त माँ के भवन पहुँचने लगे थे, मगर नियति को कुछ और ही मंजूर था। कहा जाता है कि भारत में जब मुगल शासन काल शुरू हुआ और मुगलो द्वारा भारत में मंदिर को गिराने और उसकी जहग मजिस्द बनाने का काम शुरू हुआ, उसी में माँ कामाख्या के भवन को भी मुगल शासक औरंगजेब द्वारा तोड़वा दिय गया। कुछ का मानना है कि अंग्रेजो के शासन काल में इसे तोड़ा गया। वर्ष 1840 ई0 तक मंदिर में खंड़ित मूर्तियों की ही पूजा होती रही। इनमें प्रमुख रूप से काली, महाकाली, सरस्वती, यक्ष, यक्षिनी, भैरो व चेरो-खरवार की मूर्तियाँ थी।

सन् 1841 ई0 में अपनी गहमर के र्स्वणकार तेजमन ने मनोकामाना पूर्ण होने के बाद इस मंदिर के पुनःनिर्माण का बीड़ा उठाया। मंदिर का निर्माण प्राकृतिक यंत्र व्यवस्था के आधार पर काशी के महा पंडितो को बुला कर कराया गया। निमार्ण के बाद मंदिर में खंडित मूर्ति के स्थान पर नई मूर्ति की स्थापना की गयी। जब भारत में अंग्रेजी शासन के जुल्म बढ़ने लगे तो यहाँ के लोग आजादी की लड़ाई में शामिल हो गये और मंदिर के निर्माण का कार्य बहुत धीरे गति से होने लगा। वर्ष 1980 में गहमर के जनमेजय

सिंह ने अपनी मनोकामाना पूर्ण होने के बाद मंदिर परिसर के सुन्दरीकरण का कार्य शुरू कराया। मंदिर का जीणोद्वार प्रारम्भ हुआ माँ के अगल- बगल सरस्वती व लक्ष्मी की मूर्ति की तथा मुख्य द्वारा पर गणेशजी की काली मूर्ति लगायी गयी।

उत्तर प्रदेश के गाजीपुर-बारा मार्ग मुख्य मार्ग पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी द्वार के शक्ल का मुख्य स्वागत द्वार बनाया गया। मंदिर के समीप लगभग एक बीघे में तालाब बने का निर्माण श्रमदान से हुआ। मंदिर परिसर में ही विवाह भवन, सास्कृतिक मंच, अतिथि भवन एवं पुलिस चौकी का निर्माण कराया गया। मंदिर के मुख्य द्वार पर एक गुफा का निर्माण करा कर उस शेर की प्रतिमा एवं धातु का बना हआ 20 फीट ऊचाँ त्रिशुल बनाया स्थापित किया गया । गर्भ गृह के नीचे भैरो बाबा का मंदिर स्थापित किया गया। मंदिर परिसर में स्व-चलित झाँकियाँ बनाकर लगाई गई।

सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं अन्य आयोजनो के लिये मंदिर के युनियन बैंक आफ इन्डिया द्वारा एक मंच बनवाया गया। प्रसाद एवं जलपान के सुनियोजित बाजार का निर्माण भी मंदिर के पास ही कराया गया। वन विभाग द्वारा डाक बंगले की स्थापना की गई।

पूजा-अर्चना

माँ कामाख्या का मंदिर भारत के शक्ति-पीठों में अपना एक अलग स्थान रखता है, इस लिए यहाँ पूजा भी पूरे वैदिक रीति रिवाज के साथ होती है। मंदिर के पुजारी सूर्योदय से पूर्व ही गंगा स्नान कर शुद्ध गंगा जल मंदिर तक लाते है जिससे माँ को स्नान कराया जाता है और उनका श्रृंगार किया जाता है। भक्तो का समूह मंदिर के चारो तरफ जमा होकर माँ की आरती गाता है। मुख्य पुजारी मंदिर का कपाट बंद कर विशेष पूजा करते है। पूजा उपरान्त ही मंदिर भक्तो के लिए खोला जाता है। भक्त आरती के बाद आरती लेकर प्रसाद ग्रहण करते है। दूर दराज से आये भक्त नारियल, चुनरी से पूजा माँ की पूजा करते है। भक्त अपनी मनोकामना पूर्ण करने के लिए गर्भगृह के बाहर नीम के पेड़ में मनौती का धागा बाँधते है जो मनोकामना पूर्ण हो जाने के बाद गाजे-बाजे के साथ आकर वह धागा खोलते है।

वैसे तो माँ के धाम पर पूरे वर्ष मेले का माहौल रहता है परन्तु चैतीय रामनवमी में विशाल मेला लगता है। मेले में उत्तर प्रदेश के अलावा बिहार, झारखंड से भक्त पूजा-अर्चना के लिए आते है। इस मेले का मुख्य आकषर्ण अष्टमी की रात में होने वाले निशा पूजन एंव नवमी तिथि को होने वाला घुड़दौड होता है। सावन माह में भी मेले का आयोजन होता है।बच्चो के लिए झूला इत्यादि लगाये जाते है। पूरे क्षेत्र की सुहागिन औरते आकर माँ को सिन्दूर चढ़ाती है और वह सिन्दूर अपने सिन्होरे में रख कर पूरे वर्ष अपनी माँग सजाती हैं।

माँ कामाख्या की सैनिको पर बहुत कृपा रही है, यही कारण है कि गहमर क्षेत्र के सैनिक काफी कम संख्या में हताहत होते है। कहा जाता है कि युद्ध के समय माँ का प्रवास मंदिर में नहीं होता है, वह युद्ध क्षेत्र में विचरण करते हुए अपने बेटो की रक्षा करती है। गहमर क्षेत्र का हर सैनिक अपने तैनाती स्थल से घर आने एंव तैनाती स्थल पर जाने के पूर्व दर्शन करना नहीं भूलता है।बच्चों पर माँ की कृपा सदा बनी रहे इसलिए गहमर क्षेत्र में पैदा होने वाले प्रत्येक बच्चे का 3,5,7,9 वर्ष की आयु में मुंड़न संस्कार माँ के धाम पर होता है। यहाँ होने वाले मुडंन संस्कार की अपनी एक अलग ही पहचान है जो आपको विस्तार से आगे देखने को मिलेगी।

प्रमुख आयोजन एंव मेले

चैतीय नवरात्रि - माँ कामाख्या धाम मंदिर में चैतीय नवरात्रि में मेले का आयोजन होता है।नौ दिन माँ की भव्य आरती,श्रृगांर होता है। अष्टमी की रात को निशा पूजन का कार्यक्रम होता है। नवमी तिथि को मंदिर परिसर के विशाल हवन-कुण्ड में शाम तक हवन का कार्यक्रम होता है। इसी दिन परिसर में मेला लगता है पूरे परिसर में तिल रखने

मात्र की जगर नहीं होती है। समाजसेवी संस्थानों द्वारा पूरे परिसर में जगह-जगह सेवाकेन्द्र, प्याउ, मुफ्त शरबत के साथ-साथ भंडारा एंव लगंर भी आयोजित किये जाते है।

घुड़दौड़ -:

नवमी तिथि को माँ के मंदिर के पास कबीना मंत्री ओमप्रकाश सिंह के द्वारा घुडदौड़ प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। इस अवसर पर उ०प्र० और बिहार के प्रसिद्व घुड़सवार हिस्सा लेते है। इस आयोजन को देखन दूर दूर से लोग आते है।

पूर्णवासी का मेला-

माँ के धाम में चैतीय पूर्णामासी को भी भव्य मेले का आयोजन होता है। आज के मेले की खासियत यह होती है कि आज का मेला औरतो के लिये लगता है। कहा जाता है कि चैतीय नवमी के दिन और माता पूजन एवं धार्मिक क्रिया-कलापो में व्यस्त रहती है। वह माँ के दरबार में नहीं जा पाती है। औरते पूर्णमासी को माँ के दर्शन करती है और अपनी आवश्यकता की वस्तुये मेले से खरीदती है। आज भी यह मेला विशु) रूप से ग्रामीण परिवेश के अनुसार लगता है। मेले में घरेलु उपयोग की चीजें ही अधिक बिकती है।

श्रावणी मेला-

माँ कामाख्या धाम में पूरे सावन मेले का आयोजन रहता है। जगह जगह झाकियाँ झूले इत्यादि लगाये जाते है। इस माह में सुहागिन औरते माँ को सिन्दूर आर्पित करती है । चढ़ाये हुए सिन्दूर को अपने सिन्होरा“विवाह के लकड़ी के बने जिस पात्र में रख कर सिन्दूरदान होता है ” में रखती है और माँ से प्रार्थन करती है कि वह सदा सुहागिन रहें।

चौलकर्म संस्कार

माँ के दरबार में होने वाले चौलकर्म कार्यक्रम की छटा देखने लायक होती है। जगह-जगह रंग-बिरंगे कपड़ो में उघम बचाते बच्चे, सोलह श्रृंगार से सजी नव-विवाहितायें,हर तरह घूमती नजर आती हैं। पाराम्परिक देवी गीत गाती औरते, बैन्ड बाजे के धुन पर तिरकते परिवार के सदस्य और कैंची-छूरे के डर से बिलखते मुड़न करते बच्चे । कही भोजन तो कहीं चाट-सामोशे खाते नवयुवक -नवयुकतियाँ। हर तरफ खुशियों का माहौल होता है। मंदिर परिसर में हर तरह मजमा लगा रहता है। सभी एक दूसरे की सेवा में लगे रहत है।गाड़ीयों का शोर, ट्रैक्टर पर सवार हो कर आती जाती ग्रामीण महिलाएं माँ के भक्ति गीतो से सबको मंत्रमुग्ध कर देती है।

वैवाहिक कार्यक्रम-

माँ के दरबार में अब धीरे-धीरे वैवाहिक कार्यक्रम का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। अमीरी-गरीबी की परिपाटी से हट कर लोग माँ के दरबार में पंजीकरण करा कर वैवाहिक कार्यक्रम सम्पन्न करते है। इसके लिये मंदिर प्रशासन ने पूरी व्यवस्था भी कर रखी है। मंदिर के पास ही आवश्यक सामान उपलब्ध है। भोजन तथा जलपान की व्यवस्था के लिए कई नीजी होटल भी परिसर में ही उपलब्ध है।

डा० कमलेश द्विवेदी
संपादक
साहित्य सरोज

जोगीरा

अर रर रर रर र...
मोहे रंग दे तू साँवरिया देखो होली आई रे
राधा हो गई रे बावरिया, देखो होली आई रे
अर रर रर रर र...

सतरंगी मैं ओढ़ चुनरिया, सज धज कर बलखाऊं
कान्हा के रंग ही रंग जाऊं,धीरे से शरमाऊं
बाजे कान्हा की बाँसुरिया, देखो होली आई रे
मोहे रंग दे तू साँवरिया...........
अर रर रर रर र...

गोकुल के गलियन में कान्हा, भर भर के पिचकारी
डाल रहे सखियन, गोपियन पर, भीगे चूनर साड़ी
माने एक न अब रंगरसिया,देखो होली आई रे
मोहे रंग दे तू साँवरिया...........
अर रर रर रर र...

ढ़ोल, मंजीरे बाजे ,खुशियाँ लेकर होली आई
मनुहार करके हारी, तूने पकड़ी मोरी कलाई
संग संग नाचूँ ता ता थइया, देखो होली आई रे
मोहे रंग दे तू साँवरिया...........
अर रर रर रर र...

- आराधना, पटना,बिहार

प्रीत का रंग

श्याम तन श्याम मन श्याम गायेंगे हम
ऐसी होली सखे अब मनायेंगे हम।
ग्वाल बाला सभी रास लीला करें
ब्रजकिशोरी सभी राधिका बन फिरें
श्याम चरणों में ढोलक बजायेंगे हम...!!
ऐसी होली सखे ......!!
हर दिशा फागुनी , फागुनी व्योम हो।
हर्ष उत्सुक सदा रोम ही रोम हो ।
पुष्प टेसू के मिलकर लुटायेंगे हम...!!
ऐसी होली सखे ......!!
हर गली हो गलीचा बना फूल का।
बीज उग ही न पाये कहीं शूल का।
होलिका नफरतों की जलायेंगे हम !!
ऐसी होली सखे ......!!
चंग ढोलक बजे नित्य ही द्वार पर।
मन थिरकने लगें रंग बौछार पर।
श्याम चरणों में नूपुर बँधायेंगे हम!
ऐसी होली सखे ......!!
प्रीत का रंग दिल पर चढ़े जो कभी।
मिट न पाये मिटाने से फिर वो कभी।
प्रेम गंगा में डुबकी लगायेंगे हम !
ऐसी होली सखे ......!!

पुष्प लता शर्मा, नई दिल्ली

ठोकर लगा

ठोकर लगा कर
मुस्कुराया पलभर
रास्ते का पत्थर
कुछ देर ठिठककर
दर्द से कराह कर
अश्रु पोंछकर
लेकर संगत का असर
पत्थर दिल बनकर
चल पड़ा मगर
फूल मुस्कुरा कर
फिर उसी राह पर
कोशिश अब के रही
उसकी पर बेअसर
वेदना सहकर
रास्ते का पत्थर
पूरी शब भर
रोया यूं सोचकर
फूल को क्यों कर
बना दिया पत्थर
संगति का असर
फूल बना पत्थर
पत्थर बना फूल
समझा वह अपनी भूल!
मगर फूल!!
रहा कहां फूल!!

निरुपमा त्रिवेदी ,

होली जीजा संग

मेरे जीजाजी को अपने सालियो के साथ होली खेलने का बहुत शौक था।हर बार मौका तलाशते मगर हर बार असफलता हाथ लगती। मुझे होली के रंग से हमेशा डर लगता था , होली खेलने वाले जितने भी लोगों के चेहरे भूत जैसे दिखते थे और मुझे उनके लगे हुए रंग से अजीब सी बदबू आती है और मुझे आज भी डर लगता है । बहुत साल पहले की बात है होली वाले दिन मेरे जीजाजी इशारा करते की दुकान का दरवाजा खोलो और कहते कि तुम्हें रंग नहीं लगाउंगा , तेरे भैया के साथ खेलना चाहता हूं । मेरे ममेरी बहन का घर मेरे घर के सामने है और नजदीक ही पड़ता है आना जाना भी बराबर होता है । हमें प्यार भी बहुत करते हैं और हम सब का ध्यान भी रखना कि यहां नहीं जाना और यह खाना चाहिए, एक अभिभावक की तरह लेकिन होली वाले दिनों में उन्हें क्या हो जाता है कि होली सालियों के साथ हर हाल में खेलना ही है ।

एक दिन मेरी बडी बहन ने कहा कि तुम चुपचाप खड़ी हो जाना और इधर उधर मत होना ,वो रंग लगाएंगे लगाने देना , चार बार तो कोशिश कर चुके हैं रंग लगाने के लिए। मैंने कहा दीदी तुम खड़ी हो जाओ , मुझे क्यों कहती हो ?, उसने जो बात बताई ,उसे सुनकर तो खूब मजा आया , क्या बुद्धि लगाई गई है। उसने अपने साथ मेरे और भाई बहन को मिला लिया।और एक बड़ा सा टब तैयार कर लिया और उसमें बहुत सारा काला रंग घोल लिया और जैसे ही मुझे रंग लगाने मेरे जीजाजी आए , पीछे से मेरे भैया और एक दुकान का स्टाफ ने उन्हें पकड़ कर टब में बैठा दिया और वो जब भी निकलने की कोशिश करते फिर खींच कर बैठा देते ,इस तरह से उनकी यह दशा दो बार हुई , उसके बाद हमारे साथ होली खेलने की इच्छा ही खत्म हो गई हमारे रंगदार जीजाजी की ।दो तीन दिन तक वो होली के त्यौहार पर मेरे पिताजी के पैर छूने आते थे,वो आए नहीं , पिताजी ने कहा ,तेरे जीजाजी को क्या हुआ है ? इस बार घर पर आए ही नहीं ? उनकी तबियत तो ठीक है न?हम भाई बहन मुस्कुरा रहे थे और मैंने कहा आ जायेंगे , अभी भांग और रंग का असर है , खत्म होते ही आ जाएंगे , अगली होली तक। पिताजी ने मुझसे कहा , तुमने उनके साथ कोई शरारत तो नहीं की है । मैंने कहा आप हमेशा मुझसे ही यह बात क्यों कहते हैं ? आपके और भी तो बच्चे हैं ,उनसे भी पूछिए ।बस पिता जी मुस्कुराते हुए कहते मुझे ,जाओ जवाई बाबु को लेकर आओ अपने घर और कहना आपको पिताजी ने याद किया है ।

जीजाजी हम सभी भाई बहनों से नाराज हो गये थे , मगर पिताजी की बात नहीं टालते हैं। मंद मंद मुस्कुरा कर चल दिए अपनी ससुराल कि तरफ। आसपास में रहने वाली मेरी सभी सहेलियां खूब हँस रही थी और उनका मजा ले रही थी , कोई उसकी बहन लगती तो कोई उनकी भतीजी,वो सब मेरी सहेलियां है । बोलने लगी अरे वो कृष्ण भैया हमें भी ले चलो अपनी ससुराल , गुझिया और मिठाई खाने। गांव में बात बहुत जल्दी फैलती है और सबको पता चल चुका था कि हमारे भैया व चाचा की होली इस बार ऐसी गयी।

ममता गिनोड़िया मुग्धा
जोराहाट, आसाम

नियती

-अतुल त्रिवेदी

तेजी से अपने कमरे में आया और आनन-फानन में बेग में जरूरी सामान कपड़े रख कर स्टेशन की ओर चल पड़ा किंतु जाना कहां है ? वह स्वयं भी नहीं जानता था। स्टेशन की वेटिंग बेंच पर आकर बहुत ही दुखी मन से वहां पर आने जाने वाली रेलगाड़ियां व मुसाफिरों को देखकर सोचता रहा कि इस शहर को छोड़कर ही जाना ठीक है । वह कुछ निर्णय नहीं ले पा रहा था क्योंकि पिछले 7 साल पहले गांव से एक सपना लेकर इस शहर में आया था यह सोच कर कि अपने मध्यम वर्गीय परिवार के लिए कुछ कमा कर अपनी जिम्मेदारी को पूर्ण करने की कोशिश करेगा और वह कुछ हद तक इस कोशिश में सफल भी हो चुका था। हर महीने तनख्वाह में से बचत कर के परिवार को पहुंचाता भी था ।बहन की शादी करनी थी, छोटे भाई की पढ़ाई तथा अन्य घर खर्च। यह वही कंपनी थी ,जहां पर बहुत कोशिश करने के बाद नौकरी लग गई थी।

सब कुछ बहुत ही अच्छा चल रहा था। उसी कंपनी में उसकी एक सहकर्मी “काजल” भी उसके साथ कार्य कर रही थी, वह रोहित का बहुत ध्यान रखती थी। वह एक प्रतिष्ठित परिवार की लड़की थी हालांकि उसे “पैसे के लिए ” नौकरी की आवश्यकता तो नहीं थी लेकिन फिर भी एमबीए किया था, इस कारण वह अपनी शिक्षा का उपयोग करना चाहती थी, रोहित की ईमानदारी व कार्य के प्रति लगन, कंपनी की प्रति कर्मठता किसी भी प्रकार के व्यसन से मुक्त एक सादे जीवन से अत्यंत ही प्रभावित थी। कई बार कुछ तकनीकि समस्या आने के कारण रोहित को उससे मदद भी लेनी होती थी और वह खुशी-खुशी उसकी मदद करने को तत्पर रहती थी। काजल के पिता उसकी शादी के लिए सुयोग्य वर की तलाश में थे। अच्छे उद्योगपति एवं धनाढ्य परिवार से रिश्ते आने शुरू हो गए, लड़के अच्छे बिजनेसमैन तथा पढ़े-लिखे परिवार से थे।जहां किसी भी तरह की कोई कमी का प्रश्न ही नहीं उठता, एक पिता भी अपनी बेटी को ऐसे ही उच्च परिवार में ब्याहना पसंद करता है जहां उसकी बेटी बहुत सुखी रहें। इधर काजल मन ही मन रोहित को पसंद करती थी और एक बार तो उसने रोहित से अपने मन की बात को कहा भी, लेकिन रोहित संबंध में अपनी रजामंदी नहीं दे पा रहा था क्योंकि उसके तथा काजल के परिवार में, उसके स्टैंडर्ड में, स्टेटस में जमीन-आसमान का अंतर है। ऐसे में वो किसी प्रतिष्ठित परिवार की लड़की को तथा उसके पिता के सम्मान व प्रतिष्ठा को ठेस नहीं पहुंचाना चाहता था। वह भी काजल को पसंद करता था लेकिन शादी के लिए कभी सोच नहीं पा रहा था। उसने एक बार काजल से यह भी कहा था, काजल तुम इतनी पढ़ी लिखी हो ,समझदार हो ,तुम्हारे लिए तो अच्छे लड़कों की लाइन लग जाएगी। उसने हंसकर जवाब दिया,“रोहित तुम ठीक कहते हो, लेकिन पैसा ही सब कुछ नहीं होता।”

मुझे ऐसे जीवनसाथी की तलाश है जो दुनिया के तामझाम व दिखावे से दूर रहे, सुख तो एक कोने में भी मिल जाता है अगर साथ अच्छा हो तो।ष्क्या तुम मेरे जीवन साथी बन सकते हो? काजल ने हंसते हुए कहा।

रोहित ने कहा,ष्क्यों मजाक कर रही हो काजल?ष्मैं कहा.... तुम कहां.....?

कुछ दिन हम अपने कार्य में व्यस्त रहे हैं तभी एक दिन शाम को काजल का फोन आया कि आज मेरे पापा ने तुम्हें अपने घर पर बुलाया है, रोहित ने पूछा कि क्या बात है?

ष्तुम घर आओगे तब बताऊंगीष् काजल ने जवाब दिया। रोहित तो जैसे असमंजस में पड़ गया उसे लग ही रहा था, काजल मुझे शादी की

बात करने के लिए ही बुला रही है, लेकिन क्या मैं उसके पिता से सामना कर पाऊंगा? क्योंकि मेरे पास तो वह सब कुछ है ही नहीं जिससे मैं इतने धनाढ्य परिवार की लड़की को खुश रह सकूं । फिर भी शाम को वह हिम्मत करके उनके घर गया। उसके पिता ने बहुत ही सम्मान पूर्वक रोहित से उसके परिवार के बारे में चर्चा की, काजल भी बहुत खुश थी, लेकिन रोहित को लगने लगा कि कहीं वह कुछ गलत कर रहा है ,इतना आलीशान बंगला, गाड़ी ,नौकर -चाकर। वह घर लौट गया, नहीं-नहीं मैं सब कुछ नहीं कर पाऊंगा.. .... मैं धोखा नहीं दे सकता..... किसी के साथ खिलवाड़ नहीं कर सकता.... मुझे शहर छोड़कर जाना ही होगा... मैं कहीं और नौकरी देख लूंगा.... तभी ट्रेन की सीटी बजने लगी , लोग ट्रेन में चढ़ने की जल्दबाजी करने लगे, वह सामान उठाकर कोच में जाकर बैठ गया , इंतजार करने लगा कि जल्दी से गाड़ी चले और जल्दी से इस शहर से दूर चले जाएं। तभी उसकी कंपनी के कुछ साथी उसे ढूंढते हुए प्लेट फ,र्म पर नजर आए, उसने छुपने की कोशिश की लेकिन वे कोच में चढ़ गए, और उसे गाड़ी से नीचे उतारा।

सामने काजल के पिता खड़े थे, उन्होंने रोहित को कहा ,बेटे, मैं भी शुरू में तुम्हारी ही तरह था यह तो मेहनत से आज मैं एक अच्छा बिजनेसमैन बन गया हूं। तुम जो सोच रहे हो ऐसा कुछ भी नहीं होगा मुझे तुम्हारे जैसे ही दामाद की तलाश थी, मैं भी तुम्हारे साथ तुम्हारे पिता व परिवार से मिलने तुम्हारे साथ चलूंगा।यह कहकर उसे गले लगाया। उधर ट्रेन ने सीटी दी...... व धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगी।

उम्मीद का बक्सा–मीना

वो समय मुट्ठी में बाँधती है
वो पैर सिर पर रख भागती है,
जब सोया होता है सूर्य भी,
वो किरणों से पहले जागती है,
धरती पर पाँव जब धरती है
वो तरह-तरह से सँवरती है,
कानों में झुमके पीतल वाले
पाँव में पायल गिल्ट की
छन छन छनकती है
काँच की चूड़ी हाथों में
लगातार खनकती है
बालों की कालिख में छिपता
लाल सिंदूर गोल बिन्दी को छूता
पतली लकड़ी जैसी कमर पे
बड़े फूलों की साड़ी
ब्लाउज खुद को गीले बालों में भिगोता
कँधे पर बंधा सोया बच्चा
लगता उसको साथी सच्चा
चली जा रही मेड़ों पर से
पीले फूलों के खेतों में
निशां मिट्टी पर लाल छपे से
छिला है पाँव शायद उसका
चेहरे पर कोई आह नहीं
उसकी कोई आसान राह नहीं
उसकी मेहनत को कभी किसी ने
किसी भी रूप में सराहा नहीं
कड़ी धूप में वो लौटेगी
लें कँधों पर बंधा बच्चा
सिर पर गट्ठर लकड़ी का
एक हाथ में खेतों का हरा साग
दूसरी मुट्ठी में बंद बक्सा उम्मीदों का।।

मीना अरोड़ा

पेड़ की जुबानी

चाहे तुम मुझे ठूंठ बना दो
फिर भी मैं निकल आऊंगा,
मैं तो देना जानता हूँ
तुम्हारी तरह लेना नहीं,
तुम मानव
अपना स्वार्थ देखते हो,
हमें या हमारी उपयोगिता नहीं,
मैं हर तकलीफ सहन करके
तुम्हें छाया देता हूँ,
मुझसे ही वातावरण शद्ध होता है
जिससे तुम सांस लेते हो,
मैं तुम्हें फल देता हूँ,
फिर भी तुम मुझे बेरहमी से
काट फेंकते हो,
क्या तुम्हें मालूम नहीं
मेरे बिना प्रकृति अधूरी है ?
मैं तो प्रकृति का
वो अभिन्न अंग हूँ
जिसके बिना धरा पर
जीवन मुश्किल है,
फिर भी मुझमें
तुम्हारी तरह अहंकार नहीं,
तुम मुझे काट फेंकते हो
और मैं तुम्हारे लिए
हर हाल में निकल आता हूँ,
क्योंकि मैं देना जानता हूँ
लेना नहीं,
जरा विचार करना
ये अत्याचार मुझपर
कर रहे हो या खुद पर ?
तुम मानव हो,
बुद्धिजीवी हो,
मेरी तरह पेड़ नहीं,
तुम बोल सकते हो,
मेरी तरह मूक नहीं,
फिर भी यदि
तुम मुझे काटोगे तो
मैं वसुधा और तुम्हें
बचाने के लिए आ जाऊंगा,
लेकिन सोचो कब तक ?

--पूनम झा
कोटा राजस्थान

कोशिश

रंग खुशियों के सजाकर,
पर्व होली का गमकता ।

वैर को दिल से मिटाओं
रुठे ं यारों को मनाओं ।
भूल के शिकवे गिलें सब
प्यार का इक पुन बनाओं।

मन का सुनापन यहां फिर
दिखेगा हमको चटकता ।

आग से कब आग बुझती
प्यार की बरसात लाओं ।
दूरियां दिल की खत्म हो
यार ऐसे गीत लाओं ।

नेह वाले रंग से ही
मन परिंदा है चहकता ।

रंग का त्योहार प्यारें
बद गली में क्यूँ विचरना ।
भांग दारु पी के प्यारें
कलहकारी यूँ न बनना ।

प्यार लेना ,प्यार देना
बीच राह में , न बहकना ।

/ जगन्नाथ पटौदी

पुरूषों की बराबरी में अस्तिव खोती नारी

समझ नहीं आता शुरू कहाँ से करुँ। आज की पीढ़ी को देखते हुए स्वयं में और समाज में खुद को जागरूक समझने वाली किशोर एवं युवा पीढ़ी से लेकर उम्र दराज लोग भी जिस तरह से संस्कृति, परंपरा और संस्कारों की मिट्टी पलीत करने में लगे हैं , उसे देख सुन कर तो सिर के बाल भी नोंच लें तो भी कम है। आखिर कब तक विज्ञान और आधुनिकता के नाम पर खुद को छलते जाएंगे ?

एक तरफ विज्ञान के नाम पर बिना पंख इतना उड़ रहे हैं कि इस उडान ने हमें हमारी धरती से मिट्टी से ही दूर कर दिया जबकि इनके भयानक परिणाम से हम इतने अनभिज्ञ भी नहीं है दूसरी तरफ आधुनिकता के नाम पर दोहरी मानसिकता लिए इस कदर जिंदगी जी रहे हैं मानों ये जिंदगी जिंदगी ना हुई एक दोहरी मानसिकता से भरी ख्वाहिशों की गठरी का बोझ मात्र है जिसे बस ढोना है, सो ढोये जा रहे हैं। कभी देखा- देखी में तो कभी होड़ में या अहंकार वश, परंतु दोनों रुपों में जीवन जी कोई नहीं रहा बस बर्बाद किये जा रहे हैं।

जैसे आज नारी सशक्तिकरण एवं बेटी बचाओ. की आड़ में अधिकांश महिलाएं, बेटीयां इन अधिकारों का नाजायज फायदा उठाने से नहीं चूकतीं । घर से स्कूल - कालेज सरकारी गैर सरकारी एवं निजी संस्थानों में अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिए कुछ भी करने को तैयार रहतीं है चाहे वह उचित हो या अनुचित। मैं स्वयं एक औरत हूँ और आप सभी इस बात का थोड़ा सा तो ज्ञान रखते होंगे कि आज कहीं ना कहीं एक नारी ही दूसरी नारी की दुश्मन है बल्कि ये कहूँ कि सबसे बड़ी शत्रु है तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। आज इस पर विचार विमर्श करना अति आवश्यक है।

घर में हमारी बेटीयाँ पढाई के नाम पर टच मोबाइल, स्कूटी - बाइक की मांग करतीं हैं आवश्यकता है तो भी नहीं है तो भी। प्रश्न यह है कि इन सभी वस्तुओं का सही उपयोग कितनी बेटीयाँ करतीं हैं या कर रहीं हैं? जब भी कोई अप्रिय घटना घटती है तो सबसे ज्यादा उस घटना का संबंध मोबाइल के संपर्क से जुड़ा सामने आता है हालांकि मोबाइल को कई प्रकार से नारी सुरक्षा एवं अन्य सुरक्षा के लिए उपयोगी बनाया गया है फिर भी वे घर से निकलती है स्कूल -कालेज के लिए ट्युशन अथवा किसी प्रशिक्षण केंद्र के लिए.. लेकिन उनमें से अधिकांश अपने किसी पुरुष मित्र के साथ स्कुटी या बाइक पर सवार कॉफी शॉप मॉल, पिक्चर,पिकनिक-स्पाट , रेस्टोरेंट अथवा सैर सपाटे जिसे आधुनिक भाषा में लॉग ड्राइव कहते हैं पर निकल जाती हैं। इन बेटीयों को कतई शर्म महसूस नहीं होती की माँ बाप किस तरह उनकी ख्वाहिशें पूरी कर रहे हैं वह उनकी आंखों में धूल झोंकने से बाज नहीं आती यही सिला देतीं हैं । नारी सशक्तिकरण और बेटी बचाओ........ का ?कितनी बेटीयां मान रखतीं है ऐसे अधिकारों का । ? फिर जब कोई अप्रिय घटना घटती है तो सारा दोष पुरुष बेटे पर क्यूँ ?

घर-घर पर भी देखी गई है महिलाएं केवल अपनी मनमानी चाहतीं है यदि ऐसा नहीं तो कितनी महिलाएं हैं जो सास ससुर ,देवर जेठ या ननद के साथ रहना पसंद करतीं हैं। नौकरी पेशे की वजह से बाहर रहने वाली महिलाओं को छोड़कर इसके लिए वह किसी ना किसी प्रकार आये दिन बात -बेबात कलह क्लेश उत्पन्न करने के लिए उतारु रहतीं हैं क्योंकि वे एकलवादी हो गई हैं स्वयं को आधुनिक समझते हुए वह इस बात को समझना ही नहीं चाहतीं की भारतीय संस्कृति में परिवार का मुख्य अंश होतीं हैं नारी। और अलग रहतीं भी हैं पति के साथ तो वहाँ भी अक्सर देखा गया है केवल अपना पलड़ा भारी रखना चाहतीं हैं क्या संयुक्त परिवार आज अभिशाप बन गया है!?

यदि संयुक्त परिवार में पति अपनी पत्नी और माता पिता के बीच सामंजस्य स्थापित करना भी

चाहे तो वह ऐसा होने नहीं देतीं क्योंकि इसके लिए उसके पास हथकंडे हैं ।(1) दहेज के लिए प्रताड़ित करने का (2) शारीरिक और मानसिक तौर पर सास ससुर द्वारा सताये जाने का और कुछ नहीं तो देवर जेठ द्वारा जोर जबरदस्ती करने अथवा बुरी नजर रखने का... अब भला एक भरा पूरा परिवार इस बात को कैसे झेले अतएव समाज में थू-थू से बचने और अपने इज्जत को बदनामी के दाग से बचाने के लिए वे बहू पर अत्याचार करने के झूठे नाम पर चुपचाप खुद अत्याचार सहते रहते हैं फिर अंततः एक समय ऐसा भी आता है जब यही महिलाएं परिवार का साथ पाने को फडफडातीं नजर आतीं हैं।

दूसरी बात -समाज के कुछेक घरों में महिलाओं (पत्नी) का किसी पर पुरुष से आकर्षण (अवैध संबंध) भी एक बसे बसाये घर परिवार को बदनामी के कटघरे में लाकर खड़ा कर देता है जो घातक सिद्व होता है जबकि पारिवारिक महिलाओं को ईट पत्थरों से बने मकान को "घर" बनाने वाली लक्ष्मी के रूप में देखा और पूजा जाता है, लेकिन इन सब में कितनी महिलाएं सफल होतीं हैं? मैंने जो कुछ भी लिखा वह चश्मदीदों के साक्ष्यों को जुटाकर लिखा है लेकिन उन बेचारों ने सिर्फ हमें गुप्त रूप से लिखने भर की अनुमति दी।

अब आज की तारीख में शादी-ब्याह भी टेढ़ी खीर हो गई है एक तरफ तो समाज में दहेज के लालची लोगों ने बेटीयों को बेजान वस्तु समझ रखा है तो वही दूसरी ओर बेटीयों ने भी किसी के बसे घर को उजाड़ने का प्रशिक्षण ले रखा है आपने अखबारों में पढ़ा और सुना होगा कि शादी हुई बड़ी धूमधाम से और पहली रात को ही दुल्हन गायब कहीं गहने कपड़े व नगदी लेकर तो कहीं पर पुरुष (आशिक) के साथ..क्या यह बेटीयों के लिए शोभनीय है ?और कुछेक के साथ तो यह भी सुना देखा गया है कि किसी गरीब बाप के पास देने को कुछ भी नहीं है सिवाय अपनी बेटी के.... तो उसे एक संपन्न परिवार का पिता अपने बेटे का ब्याह उस गरीब बेटी के साथ सिर्फ इस भावना से करके अपने घर ले जाता है कि गरीब की बेटी भी पल जाएगी और मेरे बेटे का घर भी बस जायेगा ईश्वर की कृपा से सब कुछ है हमारे पास सिवाय एक बेटी स्वरूपा बहू के.. लेकिन यहाँ भी हमारे ब्रज की एक कहावत बिल्कुल सटीक बैठती है कि"नंगा ए मिल गई पीतर,बाहर धरुं कै भीतर " अर्थात जिसके पास रोटियां भी मुश्किल से नसीब थी फिर उसे सीधे मालपुए मिलने लगें तो वह बिना उत्पात मचाये नहीं पचती सो आये दिन नखरे बात बात पर धौंस आदि अब बात फिर वहीं आकर रुक जाती है कि इतना कुछ किया फिर भी समाज में बदनामी और थू थू सो उसके मन मुताबिक परिवार को चलने पर मजबूर होना पड़ता है।

इसी क्रम में एक और बात छानबीन करने से सामने आई की बेशक कोई बेटे वाला दान दहेज नहीं मांग रहे और वह बेटी का पिता अपनी बेटी को समाज के अनुसार अच्छे से विदा करने में पूरी तरह समर्थ है तो भी वह बाज नहीं आता बेटे वालों को निचोड़ने में (आपकी गरज हो तो मेरे घर का नाम करके जाओ और अपने घर का वंश चलाओ) अर्थात जिस प्रकार सारे मेहमानों रिश्तेदारों का खाना खर्च एक बेटी का बाप वहन करता है उसी प्रकार आप भी अपना और मेरा सारा का सारा खर्चा उठाओ और बेटी ब्याह ले जाओ यहाँ एक बात और साफ कहना जरुरी है कि यदि बेटे वाले कहते हमें तो केवल आप की बेटी चाहिए अपने बेटे के लिए मंदिर में अपनों के बीच भगवान को साक्षी मानकर फेरे डलवा दो! तो बड़े अकड़ से कहता है "अरे समाज में मेरी भी कोई इज्जत है कि नहीं" सीधी बात "हींग लगे ना फिटकरी रंग चोखा ही चाहिए " बात फिर वही..... उस बेटे के पिता की भावना "ईश्वर का दिया सब कुछ है"।यहाँ एक प्रश्न फिर उठता है कि क्या ऐसी बेटीयों का फर्ज नहीं बनता की वह अपने पति के परिवार की उन भावनाओं की कदर करें। और एक अच्छी बहू बनकर खुद भी खुश रहे और परिवार को भी खुश रखे?

अब आईए आधुनिकता और स्वतंत्रता पर माना कि सजना-संवरना हर नारी का नैतिक अधिकार है लेकिन सजने-संवरने के नाम पर अंगों का सरेआम प्रर्दशन करना क्या उचित है? अधिकांश महिलाएं , बहू -बेटीयाँ बिना उम्र , अवसर और स्थान को नजर-अंदाज कर कुछ भी पहन कर चल देतीं हैं। फैशन करना आज के मुताबिक खुद को ढालना ये अलग बात है लेकिन इतनी भी नासमझी क्या सही है...कि किसी के शोकाकुल परिवार या कोई धर्म स्थल , शिवालय, देवालय पूजा के लिए भी घुटनों से भी उपर "निक्कर" वक्ष तथा बगल झांकती "टॉप " कमर से नीचे के अंगों को दिखाती" स्कीन टाइट" जींस पहन कर जाना या फिर छन्नी जैसा कपड़े का नितंब दिखाते वस्त्र पहनना। हमारी संस्कृति एवं संस्कार का हिस्सा है?

आज हम और आप अपनी भारतीय संस्कृति और संस्कारों को किस रूप में देख रहे हैं? कुछ कामकाजी नौकरी पेशा महिलाओं , बेटीयों को छोड़ कर हम या आप ये नहीं पहचान सकते। की कौन कुवांरी है कौन विवाहिता या कौन विधवा? क्योंकि इन्होंने अकारण अपनी वेषभूषा ऐसी ही बना डालीं हैं कि बस। यहाँ पर मैं आपको राम चरित मानस की एक चौपाई पर लिए चलती हूँ जो हमारी संस्कृति एवं पौराणिक इतिहास से जुड़ा है इस चौपाई में काकभुशुण्डि जी गरुड़ जी को बता रहे हैं कि

" सौभागिनी विभूषन हीना"।
विधवन्ह के सिंगार नबीना।।

इस चौपाई के अर्थानुसार सुहागन स्त्रियाँ तो पूरी तरह श्रंगार और आभूषणों से खुद को दूर रखेंगीं परंतु विधवाएं नित नये श्रंगार बनावेंगी। ऐसा दृश्य हमारे आसपास नहीं दिखाई देता ?

हम मानते हैं कि पुरुष वर्ग में बहसीपन , अहंकार और हिंसक प्रवृत्ति होती है और इसके लिए वे दोषी भी हैं, लेकिन हर दृष्टि कोण से केवल पुरुषों (बेटों) को ही दोषी ठहराना कहाँ की बुद्दिमत्ता है ? मात्र पांच दस रूपये के ब्लेड से सेविंग कर खूबसूरत दिखने वाले पुरुष (बेटे) और सौ रूपये से लेकर पांच हजार रुपये से भी अधिक का मेकअप किड खरीद कर लगाने के बाद खूबसूरत दिखने वाली स्त्रियों "बेटीयों" में क्या कोई अंतर नहीं ?हम अक्सर बड़ी बड़ी बातें करते हैं कि बेटीयों को पंख दो, उन्हें खुले आसमान में उड़ने दो, बात विचारणीय है कि क्या बेटीयाँ परिंदा है या कोई पक्षी, जो उन्हें पंख दिए जाएं। हाँ ! बेटीयों को हिम्मत और हौसला दें ये अवश्य तर्कसंगत है। उधर चार जाबांज बेटीयों ने फाइटर प्लेन चला कर परिवार और देश का नाम क्या रौशन किया इधर जमीन पर भी ठीक से पैर न रख पाने वाली चालीस... मन कर्म और वचन की पंगु बेटीयाँ भी बिना वजह खुद को उनके बराबर आंकने लगीं। यह हास्यास्पद नहीं लगता? क्या जींस शर्ट पहनना बाइक चलाना सिर के छोटे- छोटे बाल रखना या पुरुषों की तरह पूरे शरीर (बदन) को तानकर चलने को ही पुरुष की बराबरी करना कहते हैं ? हम इस बात को कतई नहीं नकार सकते की हर युग में पृथ्वी पर नारी (महिलाएं -बेटीयाँ) हमेशा से श्रेष्ठ थीं और रहीं हैं परंतु आज वह श्रेष्ठ होते हुए भी पुरुषों की बराबरी के चक्कर में अपने वास्तविक व्यवहार और नारी शिष्ठता से इतना नीचे उतर रहीं हैं कि उन्हें इसका भान ही नहीं।

मानते हैं कि पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं बेटीयों के साथ गलत हुआ है और हो भी रहा है लेकिन सारा का सारा दोष एक तरफ मढ़ कर पूरे पुरुष समाज को गलत ठहराना तो मुर्खता होगी ना?

एक तरफ हम ट्रेन बस अथवा किसी भी कार्य वश लम्बी लाइन में खड़े-बैठै पुरुषों को ये कहकर हटा या उठा देतीं हैं कि"लेडीज फस्ट" या फिर किसी अन्य महिला के लिए बेहिचक कहतीं हैं कि"अरे ! आप को शर्म आनी चाहिए आपकी माँ बहन जैसी महिला खड़ी है और आप बैठे हैं" और वहीं दूसरी तरफ कि"हम किसी पुरुष से कम हैं क्या"?यही सब दोहरापन सोचने पर विवश करता है कि आखिर हम कहना अथवा करना क्या चाहते हैं?क्या पुरुषों को दर्द नही होता?क्या उनके सर पैर नहीं दुखते नहीं?कब तक इस दोहरी

मानसिकता में जीयेंगी?आप बराबरी नहीं कर रहीं बल्कि बराबरी के चक्कर में अपने नारीत्व का अस्तित्व ही खो रहीं हैं। जरा भान कीजिये! आप नारी शक्ति हैं जिसका अनेक रुपों में प्रेम पाने को देव भी पृथ्वी पर आते रहे हैं।

मेरे लिखने या कहने का तात्पर्य सिर्फ इतना है कि आज की नारी युवा पीढ़ी ऐसी दोहरी मानसिकता से बाहर आ कर हकीकत की धरातल अपनी जमीन अपनी मिट्टी से जुड़ कर जियें क्योंकि स्वतंत्रता और स्वछंदता दोनों ही अलग है।रास्ते बेशक लम्बे हो यदि सही है तो अवश्य चुनें, छोटे रास्ते के चक्कर में गलत रास्तों का चयन भविष्य में अनेक मुसीबतों को आमंत्रित करता है यदि फिर भी कहीं कुछ गलत या अप्रिय घटना घटती है तो उसकी सही जांच हो।महिला हो अथवा पुरुष जो भी अपराधी है सजा अवश्य मिले।

यहाँ ना तो महिलाओं का विरोध है और ना ही पुरूषों की सिफारिश या सर्मथन, बात केवल उचित एवं अनुचित की है "दोषी बचें नहीं और निर्दोष फंसे नहीं" ,क्योंकि जितनी भी महिलाओं पर अत्याचार, प्रताड़ना, हिंसा और दुर्गति दिखाई देती है या फिर दिखाई जाती है वह पूरी तरह सत्य हो यह स्वाभाविक नहीं। यदि एक बेटी कुशल बहू बनकर ग्रहणी का दायित्व निभाएगी तो एक अच्छी माँ बनेगी और जब एक अच्छी माँ बनकर अपने बच्चों की परवरिश करेगी तो शक ही नहीं की वे बच्चे संस्कारवान ना बनें क्योंकि जब बच्चों को हर किसी की भावनाओं की कद्र करना बचपन में अपने परिवार से ही सीखने को मिलेगा तो वह कभी किसी की भावनाओं को ठेस पहुँचाने की सोच भी नहीं सकेगा या सकेगी तब जाकर हमारे बच्चों को दिये अधिकार सही मायने में सफल होंगे फिर चाहे वह नारी सशक्तिकरण हो या बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ वर्ना पता नहीं इस विज्ञान और आधुनिकता की अंधी दौड़ में ये युवा पीढ़ी कहाँ जा कर झपाएगी? और इसके क्या परिणाम होंगे?

संतोष शर्मा शान
हाथरस

होली

अब कहाँ रही वो होली
जब पखवाड़ा पहले से ही,
गुजिया और मठरी की खुशबू,
हर घर को महका जाती थी
फागुन के गीतों को सब
सखियाँ मिलकर के गातीं थी
वो बच्चों की अठखेली,
सबके मन को भा जाती थी
कहाँ खो गई वो हँसी-ठिठोली ?
अब कहाँ रही वो होली !
अब की होली में वो,
पहली सी बात कहाँ ?
न रंगों में फूलों की खुशबू,
रिश्तों की मिठास कहाँ ?
राधा कृष्ण सा प्रेम कहाँ ?
वो रास कहाँ वो राग कहाँ !
वो उमंग उल्लास कहाँ
दिव्यता का भास कहाँ
जाने कहाँ खो गई वो होली !
अब कहाँ रही वो होली?
निकलती थी बेफिक्री से
जब नौजवानों की टोलियाँ
ढ़ोल नगाडों के संग
वो गीतों की बोलियाँ
दिखती हैं अब सड़कों पर
मवालियों की ही टोलियाँ
घरों में बंद होकर अब
रह गई हैं गोरियाँ
हुड़दंग हो गई है अब होली
अब कहाँ रही वो होली !
प्रेम-प्यार की जो तस्वीर थी होली
रूठों को मनाने की तरकीब थी होली
झगड़े का अब सबब बन गई है
चीर-हरण का चलन बन गई है
अब तो बस डराने लगी है होली
अब कहाँ रही वो होली !

किरण बाला
चण्डीगढ़

संस्मरण

होली जो ना भूली

मुझे बचपन से ही होली का त्योहार इतना पसंद नहीं। कितना भी कह लो लोगों की यही कोशिश रहती है कि सामने वाले को इतना पक्का रंग लगाए कि उसे छुड़ाते-छुड़ाते उसे नानी तो याद आ ही जाए। लोगों की इस सोच से परिचित होने के कारण मेरी यही कोशिश रहती कि होली के दिन मैं बाहर ही न निकलूँ। शाम को बड़ों को अबीर लगाकर आशीर्वाद लेने का रिवाज मुझे अच्छा लगता है। होली मतलब माँ के हाथों से बना हुआ पकवान और शाम को नए कपड़े पहनना ही मेरे लिए होली का मुख्य आकर्षण था। जंगलियों की तरह एक दूसरे को दौड़ाकर जबरजस्ती रंग लगाना, रंग न हो तो पानी ही डाल देना ये ऐसे दृश्य हैं जो मुझे बिलकुल भी पसंद नहीं। यही कारण है कि मैंने अधिकतर हर होली पर अपना समय माँ के साथ रसोई में ही बिताई।

एक बार की बात है माँ की कुछ सखियाँ उनसे होली खेलने आई। सब रंगों में डूबकर अपनी पहचान खो चुकी थी। उन्हें देखकर मैं तो अंदर ही रही पर माँ को बाहर निकलना पड़ा। फिर मुझे लगा माँ उन सबका सामना अकेले कैसे करेगी, सब उन्हें रंग में डुबोकर ही मानेंगी। तो माँ की सहायता करने के इरादे से मैंने भी खूब सारा रंग घोला और सीढ़ियों से उतरती उन चाचियों पर रंग फेंक दिया पर पता नहीं कैसे बीच में माँ आ गई और सारा रंग उन पर ही गिर गया और वो चाचीयाँ भी मजाक उड़ाते हुए चली गई कि अब बेटी ने भी अच्छी तरह से माँ से होली खेल लिया। मुझे बहुत बुरा लगा, इतना बुरा लगा कि उस घटना को याद कर आज भी बुरा लगता है। माँ भी हँसकर रह गई थी, वो मेरे इरादे को समझ गई थी कि मैं क्या चाहती थी। खैर यह घटना सबके लिए हँसने का बहाना बन गया। मैं भी कुछ न कर पाई और रसोई में माँ की सहायता करती रही।

जब शादी के बाद पहली होली आई तो मैंने सोचा कि बाहर तो किसी से होली नहीं खेलूँगी पर अपने पतिदेव को रंग जरूर लगाऊँगी। पर उन्होंने भी बता कि उन्हें रंग खेलना बिलकुल पसंद नहीं सिर्फ अबीर का एक टीका लगाना। तो होली के मामले में हम दोनों एक-से निकले। मेरे लिए होली का मतलब अच्छे-अच्छे पकवानका पर्याय ही बनकर रह गया। पर एक साल की होली ऐसी यादगार होली थी कि हमेशा याद रहेगी।

हर साल की तरह होली आई। 2004 या 2005 की बात है। हम राँची में थे, वहाँ एक घर ऐसा है जो अपने घर जैसा ही है। हर साल की तरह मैंने कुछ पकवान बनाए थे और बस घर के अंदर से ही लोगों की होली वाली कुश्ती देख रहे थे। फिर अचानक इन्होंने कहा '' मुकेश के घर चलोगी?" मैंने कहा "पहले बोलते अभी कैसे और ये सब जो बनाई हूँ कौन खाएगा?" तो इन्होंने कहा चलो वही लेते चलते हैं। घर पर वैसे भी मन नहीं लग रहा था और वहाँ मुकेश, रुचि दीदी, बीनू, संतोष, चाचा-चाची सब थे तो मैं भी तुरंत जाने के लिए तैयार हो गई। बस मन में ये भय था कि रास्ते में कोई रंग भरे गुब्बारे न मारे। हम बिना किसी के गुब्बारे का शिकार हुए मुकेश जी के घर पहुँच गए। मुकेश जी और अन्य सभी लगभग हमउम्र ही थे । सब बहुत खुश हुए एक दूसरे से मिलकर। उस साल हमने होली खेली पर अबीर से ही। हम सबके घर अबीर लेकर जाते , उन्हें अबीर लगाते और वो भी अबीर ही लगा रहे थे। ऐसा लगा जैसे अचानक दुनिया सभ्य हो गई। इतनी सभ्यता भरी होली तो मैंने न देखी थी न सुनी थी। रुचि दीदी ने तरह-तरह की स्वादिष्ट चीजें बनाकर खिलाई। हम सबने मिलकर धूम मचा दिया घर में, नाचे, खाए-पिए, घूमे, शब्दों में उन पलों को व्याख्या नहीं कर सकती। पर अब तक की वही सबसे खूबसूरत और यादगार होली थी।

सीमा मिश्रा
हिसार

गुम रिश्तो की मिठास

गाँव में कितनी भी दुश्मनी क्यों न हो, आपस में एक दूसरे के घर आना-जाना, खान-पान सब बंद क्यों न हो, परन्तु उस घर का कोई रिश्तेदार सामने से गुज़र गया तो क्या मज़ाल की " का रे हितवा, कहाँ जात बाड़े रे, कहीया अइले ह रे सा.." या "का पाहुन का हाल बा कहीया अइल ह"। फिर शुरू हो जाता था हंसी मज़ाक गालीयों का दौर, चाय पानी का दौर। कभी कभी तो ऐसा होता था कि रिश्तेदार जिनके घर आये हैं उनके घर केवल उनका समाना पहुँचता था और वह जब घर पहुँचते तो पेट में जगह ही नहीं रहती थी कि कुछ वहाँ भी खाया पीया जाये। रिश्तों का एक अनूठा आंन्नद प्राप्त होता था। किसी के घर की साली उस उम्र वर्ग के हर व्यकित की साली हो जाती थी। किसी की भाभी उस उम्र वर्ग की सबकी भाभी हो जाती थी, चुहल, हसी मज़ाक, खाना खिलाना सब हसते हुए ऐसा लगता था कि जीवन यही है।

भले ही बेटी की सास या बहू की माँ से कभी मुलाकात नहीं हुई हो, या बहुत ही सीमित मुलाकात हुई हो, मगर बातों में समधी-समधन का जिक्र जरूरत आता। नाना बाबा दादी को, बाबा नानी नानी को लेकर बच्चों से बोलते चिड़ाते हमेशा दिख जाते थे। समधी अगर आ गया तो चौपाले सज जाती थी और कही समधन भी आ गई तो बालों में खिज़ाब तो निश्चित लग जाते थे, खेत से ताजी सब्जीयाँ, दूध-दही खास तौर से समधन जी के लिए जरूरत आ जाती थी।

आज जमाने के साथ साथ हम भी अपने को बदल लियें, खून में मिठास बढ़ती गई, रिश्तों की मिठास गायब होती गई। हसी मज़ाक के रिश्ते तो अंहकार की चादर ओढ़ कर सो गये। चुलह करना तो जैसे सभ्य समाज में गैर क्षम्य अपराध की परिभाषा हो गई। असम्यता की निशानी हो गई।

संगमरमर लगे वातानुकुलित कमरे में कोट पैंट टाई जैसे कहते हो कि बाबू साहब हसी-मज़ाक बंद करो। देवर-भाभी के रिश्ते, ननद-भाभी के रिश्ते, साला-साली के समधी-समधन के रिश्ते, इन की मिठास तो अब कल्पना में भी नहीं सामने आती है।

महानगरो से निकल यह अंहकार, यह दिखावापन शहरो से होता हुआ अब गाँव की सीमाओ में भी प्रवेश कर चुका है। यही कारण है कि हम होली जैसे त्यौहार भी फीके लगने लगे हैं। खुले आंगन में होने वाले, खुले समाज में होने वाले त्यौहार अब गम्भीरता के चादर में लिपटे बंद कमरों या आर्थिक हित साधकों के बीच सिमट कर रह गये हैं। यदि ऐसा ही चलता तो मेरा दावा है कि तनाव जैसी सुरसा न सिर्फ हमारे रिश्तों को निगल लेगी, बल्कि हमारी खुशीयों को हमारे स्वास्थ को भी अपना आहार बना लेगी। हम भूल जायेगें कि रिश्ते किसे कहे जाते थे? हम भूल जायेगें कि इन रिश्तों का महत्व क्या होता था?

आज रिश्ते तो रिश्ते दोस्ती भी गिलासों तक सिमट कर रह गई, दोस्तों का परिचय अब फेशबुक मित्र, व्यवसाई मित्र, साहित्कार मित्र और ना जाने कौन-कौन से उपाधि के मित्र हो गये और उनके बीच बातों का तरीका, खान-पान का तरीका भी उपाधियों के तरह हो गया। "मित्र" जैसा व्यापक शब्द उपाधि के बिना अधूरा हो गया, दिल के रिश्ते समाजिकता के रिश्ते हो गये।

जब कभी सोचता हूँ आज के रिश्ते से गायब मिठास को तो मैं अंहकार पूर्वक कहता हूँ कि मैं जाहिल ही माना जाऊँ समाज में, मैं बेवकूफ ही माना जाऊँ समाज में तो भी अच्छा है, कम से कम रिश्तों के वास्तिव आन्नद से, उसके वास्तिव रूप से, हसी-मज़ाक के आनन्द से विरक्त तो नहीं होता, इसके साथ अपनी जिंन्दगी तो जीता हूँ। जिसे यह पंसद नहीं उसको उसकी दुनिया मुबारक, मुझे अपनी दुनिया मुबारक, यही है चार दिन की जिंन्दगी का सच, फिर हम कहाँ तुम कहाँ।

त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका साहित्य सरोज

(RNI NO. UPHIN/2017/74520)

की संस्थापिका श्रीमती सरोज सिंह की

चतुर्थ पुण्य तिथि 02 अप्रैल 2021 को

ग्राम गहमर जनपद गाजीपुर (उ0प्र0) में आयोजित

श्रीमती सरोज सिंह महिला उत्थान दिवस

स्व.श्रीमती सरोज सिंह

प्रस्तुतकर्ता

अखंड प्रताप सिंह,प्रवन्धक गहमर वेलफेयर सोसाइटी

प्रकाशक साहित्य सरोज व संपादक महिलाओं की पत्रिका

9451647845 ई मेल akhandgahmari@gamil.com

सह आयोजक -: श्याम मेडिकल स्टोर धरहरा मुँगेर, एस.एस.ब्यूटी हब भागलपुर

डी0पी0 चतुर्वेदी महाविद्यालय सिवनी, ए0आई एम पूना,अंश इन्फोबे गहमर

श्रृधा क्लासेज गहमर, साहित्य कला संगम विदिशा,एवं

सिनर्जी टेलीमैट्रिक प्रा0 लि0 नोएडा